प्रभात

इस अंक में .....

1. चीनी क्रांति की जीत
2. चीनी क्रांति - कुछ प्रमुख घटनाएं
3. जनदिशा
4. छापामार युद्ध
5. छोटे छापामार दस्ते
6. जनवादी केन्द्रीयता पर बहस

भारत की कम्यूनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी - लेनिनवादी) (पीपुल्सवार) दण्डकारण्य स्पेशल जोनल कमेटी का तिमाही मुख-पत्र

चीनी अक्टूबर क्रान्ति की जीत की 50वीं वार्षिकी का विशेषांक - 1999 मूल्य - 10 रुपये

माओ विचारधारा का परचम उंचा उठाकर जंग की राह में आगे-आगे बढ़ेंगे !

'' ***चीनी जनता शान से खड़ी हो गयी*** ...'' कहकर समूची दुनियाँ को 1 अक्टूबर, 1949 को चीनी जन-गणराज्य के गठन का ऐलान करते हुए कॉमरेड माओ

चीनी अक्टूबर क्रांति की जीत की 50वीं वार्षिकी को क्रांतिकारी जय-जयकार !

चीनी क्रान्ति की जीत माओ विचाराधारा की जीत ही है

मार्क्सवाद-लेनिनवाद - माओ विचारधारा अपराजेय है

ठीक 50 साल पहले, 1 अक्टूबर, 1949 को चीनी जनता ने सामंतवाद-विरोधी और साम्राज्यवाद-विरोधी नव जनवादी क्रान्ति में अन्तिम जीत हासिल की । सामंतवाद को दफना दिया । साम्राज्यवाद और नौकरशाही दलाल पूंजीवाद को अपनी धरती से मार भगाया । मुक्त और आजाद चीनी जन-गणराज्य की स्थापना की । मजदूर, किसान, निम्न पूंजीपति और राष्ट्रीय पूंजीपति वर्गों से सम्मिलित, सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में चलनेवाली जनता की जनवादी तानाशाही सरकार का गठन किया । लेकिन यह जीत उन्हें आसानी से नहीं मिली । सौ से ज्यादा सालों तक वे संघर्ष करते रहे । असीमित कुरबानियां दीं । वे उपलब्धियों को हासिल होते देखे और जल्दी ही हाथ से छूटते देखे । आशा और निराशा के बीच छटपटाते रहे । इसके बावजूद चीनी लोग अपनी पकड़ में रत्ती भर ढील भी नहीं देते हुए हर सम्भव तरीके में लड़ते ही गए । खून की कुरबानियों के इस लम्बे संघर्ष में उन्हें सर्वहारा का नेतृत्व प्राप्त हो जाने के बाद, मार्क्सवाद-लेनिनवाद की सार्वभौमिक सच्चाई ने जब से उनके क्रान्ति पथ को रोशन करना शुरु किया, यानी 1921 में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का गठन और उसके द्वारा नेतृत्व की कमान सम्भाले जाने के बाद ही, और भी कहा जाए तो जब से चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने माओ विचाराधारा को बतौर अपने मार्गदर्शक सिद्धान्त के स्वीकार किया, तभी से उनके लक्ष्य को हासिल करने के लिये एक साफ रास्ता मिल गया और इस रास्ते पर चलते हुये उन्होंने दो-दो क्रान्तिकारी गृहयुद्ध के कालों, जापान-विरोधी प्रतिरोध युद्ध के काल और अन्तिम मुक्ति के काल के दौरान अपनी खुद की जन सेना का निर्माण किया । देहाती इलाकों से जनता के दुश्मनों को खदेड़कर आधार-क्षेत्रों की स्थापना की । मजदूर-किसान की मैत्री की बुनियाद पर अन्य क्रान्तिकारी वर्गों को मिलाकर विशाल संयुक्त मोर्चा का निर्माण किया तथा अन्ततया शहरों को, जो कि उनके दुश्मनों के मजबूत अड्डे हैं, को घेरकर, उन्हें हराकर राजसत्ता हासिल की।

1949 के अक्टूबर माह में जीत हासिल करने के बाद माओ विचारधारा के झण्डे तले चलते हुए चीनी लोगों ने 'जमीन उसी की जो उसे जोते' के आधार पर देश भर में व्यापक कृषि क्रान्ति पर अमल किया । साम्राज्यवादी और नौकरशाही दलाल पूंजीपति वर्गों के उद्योग-व्यापारों को छीनकर समाजवादी औद्योगिक क्षेत्र की नींव डाली और उसके बाद गरीब और पिछड़ा देश चीन को आधुनिक कृषि, उद्योग और व्यापार से समृद्ध समाजवादी चीन में तब्दील करने का समाजवादी परिवर्तन कार्यक्रम अपनाया । 1956 तक खेती-किसानी, दस्तकारी, निजी पूंजीपतियों के उद्योग और व्यापार के क्षेत्रों में संपूर्ण रूप से नहीं तो बुनियादी समाजवादी परिवर्तन हासिल किया गया । 1958 के महान आगे कदम के काल से शुरु करके देश भर में महत्वपूर्ण जन कम्यूनों की स्थापना करते हुए साम्यवाद की ओर तेजी से कदम बढ़ाए । शोषक वर्ग की बुनियाद को जड़ों से उखाड़ फेंकने के बाद विचारधारा के क्षेत्र में शोषकवर्गीय विचारधारा को स्थाई तौर पर दफनाने के लक्ष्य से महान आगे कदम और समाजवादी शिक्षा के कार्यक्रम चलाए और इसकी चरम अवस्था के तौर पर 1966 में महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति शुरु की । वह ऐसी सबसे पहली महान क्रान्ति थी जिसका लक्ष्य मनुष्यों के दिमाग से शोषक वर्गीय विचारधारा को पूरी तरह मिटाकर मनुष्यों को स्वार्थरहित और कम्युनिस्ट बनाना था । रूस की अक्टूबर समाजवादी क्रान्ति और चीनी क्रान्ति के बाद विश्व की मानवजाति के इतिहास में वह तीसरी महान क्रान्ति थी । चीनी क्रान्ति ने वर्गरहित समाज की स्थापना के लिये विश्व के सर्वहारा द्वारा जारी संघर्ष को एक नया हथियार - सांस्कृतिक क्रान्ति का हथियार प्रदान किया ।

चीन में नव जनवादी क्रान्ति की जीत, समाजवादी क्रान्ति की जीत और महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति की जीत के पीछे एक ही संचालक ताकत थी, वह है माओ विचारधारा । चीनी क्रान्ति की जीत माओ विचारधारा की ही जीत थी ।

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना रूस की अक्टूबर समाजवादी क्रान्ति की जीत की प्रेरणा से और कॉमरेड लेनिन के नेतृत्व वाले दूसरी इंटरनेशनल के सहयोग से 1921 में हुई । और बिना देर के संघर्ष में उतरकर उसने चीनी क्रान्ति का नेतृत्व करना शुरु किया । 1935 तक उसके केन्द्रीय नेतृत्व दक्षिणपंथी, वामपंथी अवसरवादियों और कठमुल्लावादियों के हाथों में रह जाने के कारण उसे जीतों के बजाए काफी नुकसान उठाने पड़े । उस दौरान कॉमरेड माओ सही लेनिनवादी कार्यदिशा से जुड़े रहते हुए मार्क्सवाद-लेनिनवाद की सार्वभौमिक सच्चाई को चीनी क्रान्ति के ठोस हालात में लागू करते हुए उस क्रान्ति की मूलभूत समस्याओं के समाधान के लिए जरूरी तौर तरीके बनाते रहे । पार्टी के भीतर गलत रुझानों के खिलाफ लड़ते रहे । 1935 की ऐतिहासिक सुनई बैठक में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने गलत नेतृत्व का पिंड छुड़ाकर महान अध्यापक माओ को अपना नेता चुन लिया और माओ विचारधारा को बतौर अपने मार्गदर्शक सिद्धान्त के स्वीकारा । उस दिन से लेकर 1976 में उनकी मृत्यु तक उसी विचारधारा से जुड़े रहते हुए वह लगातार कामयाबियां हासिल करती गई ।

चीनी क्रान्ति की जीत के अलावा, विएतनाम, लाओस और कम्पूचिया में चली सफल क्रान्तियों, जो कि चीन की राह पर ही चलीं, ने साबित किया कि माओ विचारधारा का उदय चीनी क्रान्ति के ठोस व्यवहार से होने के बावजूद, उसकी सार्वभौमिक अहमियत है । उसी विचारधारा को ऊंचा उठाकर विश्व भर के फिलिपीन्स, पेरू, नेपाल, तुर्की, भारत जैसे कई देशों की मार्क्सवादी–लेनिनवादी पार्टियों द्वारा चलाए जा रहे जनयुद्ध और हासिल की जा रही कामयाबियां भी इसी तथ्य को साबित कर रही है ।

विश्व की उत्पीड़ित जनता की मुक्ति के लिए माओ विचारधारा द्वारा मिली नई राह

औपनिवेशिक और अर्ध–औपनिवेशिक देशों की क्रान्तियों पर लेनिनवादी सिद्धान्त को कॉमरेड माओ ने चीन के ठोस हालात में क्रियान्वयन करते हुए, उसे और भी ज्यादा व्यापक और वैज्ञानिक रूप देते हुए नव जनवादी क्रान्ति का सिद्धान्त को प्रारूपित किया। उसमें औपनिवेशिक और अर्ध–औपनिवेशिक देशों में चलने वाली क्रान्ति के स्वभाव, उसके निशानों, उसका नेतृत्व करने वाली ताकत, संचालक शक्तियों, मित्रों, जीत हासिल करने के लिए आवश्यक दीर्घकालीन जनयुद्ध की कार्यदिशा के अलावा, उस क्रान्ति के आर्थिक और सांस्कृतिक कार्यभार भी जोड़ा । इस सिद्धान्त में बताया गया कि 1917 के पहले की तमाम सामंतवाद विरोधी क्रान्तियां, जिनका नेतृत्व बुर्जुवाई वर्ग करता था, पुरानी तरह की बुर्जुवाई क्रान्ति का हिस्सा है; 1917 की रूस की अक्टूबर समाजवादी क्रान्ति के बाद हो रही तमाम क्रान्तियां विश्व समाजवादी क्रान्ति के तहत चलेंगी; इन क्रान्तियों का नेतृत्व सर्वहारा वर्ग को ही करना होगा, अब चूंकि बुर्जुवाई वर्ग दो हिस्सों – दलाल पूंजीपति वर्ग और राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग – में बँट चुका है, जिनमें से दलाल पूंजीपति वर्ग क्रान्ति का निशाना है, जबकि राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग चार वर्गों के संयुक्त मोर्चे का हिस्सा होगा, जिसमें उसके अलावा सर्वहारा वर्ग, किसान वर्ग और निम्न – पूंजीपति वर्ग होंगे तथा इस संयुक्त मोर्चे में सर्वहारा वर्ग नेतृत्वकारी ताकत होगा जबकि किसान प्रमुख संचालक ताकत होंगे । उसमें यह भी बताया गया कि ऐसी क्रान्ति अपने आप में समाजवादी क्रान्ति न होगी, भले ही वह विश्व समाजवादी क्रान्ति का हिस्सा हो । उसे पहले बुर्जुवाई जनवादी क्रान्ति के कर्तव्यों को पूरा करना होगा, और उसके बाद समाजवादी क्रान्ति की ओर पलटना होगा। पहले चरण को पूरा करके एक और रक्तपातपूर्ण क्रान्ति के बिना ही समाजवादी क्रान्ति में तब्दील किया जा सकता है ।

पार्टी के भीतर कुछ गलत प्रवृत्तियां थीं, जिनकी जिद थी कि चीनी क्रान्ति को रूस की अक्टूबर समाजवादी क्रान्ति के नमूने में, यानी सार्वभौमिक हथियारबन्द विद्रोह की राह चलना होगा और मुख्य रूप में कृषि प्रधान देश चीन में चलने वाली क्रान्ति में किसानों की भूमिका को नकारा जाता था । कॉमरेड माओ ने इन गलत प्रवृत्तियों के खिलाफ लड़ते हुए औपनिवेशिक, अर्ध–औपनिवेशिक और अर्ध–सामंती देशों में सर्वहारा वर्ग राजसत्ता हासिल कर सके, उसके लिए दीर्घकालीन जनयुद्ध की कार्यदिशा को प्रारूपित किया । जनयुद्ध की यह कार्यदिशा स्पष्ट करती है कि ऐसे देशों में सर्वहारा वर्ग का अगुआ दस्ता कम्युनिस्ट पार्टी को चाहिए कि अपने गतिविधियों को शहरों जो कि दुश्मन के मजबूत अड्डे हैं, के बजाए देहाती इलाकों में केन्द्रित किया जाए जहां पर दुश्मन अपेक्षापूर्ण कमजोर रहता है; विशाल किसान समुदायों को 'जमीन उसकी जो उसे जोते' के तहत चलने वाली खेतिहर क्रान्ति के जरिए संगठित करके, जनता से जन सेना और जन मिलीशिया का निर्माण करते हुए, छापामार युद्ध के जरिए दुश्मन को परास्त करके, भगाकर आधार–क्षेत्रों की स्थापना करते हुए उनकी संख्या और आकार को सिलसिलेवार बढ़ाते हुए, अंत में शहरों को घेरकर राजसत्ता हासिल की जानी चाहिए । जनयुद्ध का यह सिद्धान्त मात्र सैनिक सिद्धान्त ही नहीं है । इस सिद्धान्त में सैनिक कार्यनीति के अलावा उन सैद्धान्तिक और राजनीतिक दांव–पेंचों का भी समावेश है, जिन पर सर्वहारा वर्ग को पूंजीपति वर्ग के विरुद्ध अपने संघर्ष में अमल करना चाहिए । वह जन–समुदायों को युद्ध में गोलबन्द करने के तौर–तरीकों, जन सेना और विशाल संयुक्त मोर्चे के निर्माण के नियम भी बताता है । इस जनयुद्ध की कार्यदिशा को चीनी क्रान्ति के व्यवहार में लागू करते हुए कॉमरेड माओ ने उन अनमोल अनुभवों से छापामार युद्ध, चलायमान युद्ध और मोर्चाबन्द युद्ध के बारे में तथा उनके आपसी सम्बन्धों के बारे में बुनियादी नियम विकसित किए । इसके जरिए उन्होंने विश्व के सर्वहारा को उसका अपना व्यापक फौजी विज्ञान उपलब्ध कराया।

कॉमरेड माओ ने दर्शनशास्त्र का भी बढ़िया विकास किया । अपना लेख 'अन्तरविरोध के बारे में' में उन्होंने विपरीत पहलुओं के बीच एकता ओर द्वन्द्व जो कि द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद का बुनियादी उसूल है, पर लेनिन के विचारों को और भी विकसित किया । 'व्यवहार के बारे में' नामक अपने लेख में उन्होंने मार्क्सवादी ज्ञान–सिद्धान्त को ज्यादा समृद्ध बनाया । समाजवादी क्रान्ति के चरण में उनके द्वारा रचित 'दस प्रमुख सम्बन्ध' और 'जनता के बीच अन्तरविरोधों को सही तरीके से हल करने के बारे में' नामक लेखों ने द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद को ज्यादा मजबूती प्रदान की ।

जहां तक कम्युनिस्ट पार्टी के सांगठनिक उसूलों का सवाल है, कॉमरेड माओ ने लेनिनवादी, सांगठनिक उसूलों को विकसित किया । उन्होंने सर्वहारा पार्टी को भी विकासहीन और एकीकृत खण्ड के रूप में देखने के बजाए, बाकी सभी दृश्य पदार्थों की तरह विपरीत पहलुओं के बीच एकता और द्वन्द्व के जरिए, चीनी पूंजीवादी विश्व–दृष्टिकोण और सर्वहारा विश्व दृष्टिकोण के बीच संघर्ष के जरिए विकास होने वाली माना । अवसरवादी, कठमुल्लापंथी एवं संशोधनवादी रुझानों और कार्यदिशाओं के खिलाफ सही मार्क्सवादी–लेनिनवादी कार्यदिशा से लड़े जाने वाला दो कार्यदिशाओं के संघर्ष के जरिए, आलोचना–आत्मालोचना और भूल–सुधार आन्दोलनों के जरिए पार्टी के सर्वहारा क्रान्तिकारी स्वभाव का संरक्षण करने का तरीका कॉमरेड माओ ने विकसित किया।

इस तरह हम देख सकते हैं कि चीनी क्रान्ति की जीत के दौरान मार्क्सवाद–लेनिनवाद उस नए चरण पर विकसित होता गया जिसका नाम है माओ विचारधारा । लेकिन चीनी क्रान्ति की प्रगति का अन्त 1949 के साथ नहीं हुआ । वह नए रूप में जारी रही ।

1949 में क्रान्ति की जीत के बाद हुए युद्ध से बुरी तरह क्षतिग्रस्त हुई अर्थव्यवस्था में नई जान फूंककर जनवादी अर्थव्यवस्था की स्थापना करने की जरूरत सामने आई। उसके बाद सिलसिलेवार समाजवाद की ओर सफर करना था। इसके लिए परिवर्तन के उस पूरे दौर में सर्वहारा तानाशाही के तहत क्रान्ति को जारी रखना जरूरी था। 1953 तक देश भर में 'जमीन उसी की जो उसे जोते' के आधार पर व्यापक भूमि-सुधारों को लागू किया गया। सरकारी क्षेत्र और निजी क्षेत्र के उद्योगों को बहाल किया गया। 1956 तक कृषि और दस्तकारी के क्षेत्रों में सहकार संघों की स्थापना करके, निजी पूंजीवादी उद्योगों और वाणिज्यों को नियंत्रित करने, इस्तेमाल करने और खरीद डालने की प्रक्रियाओं द्वारा सरकारी प्रबन्धन या सरकारी-निजी साझे प्रबन्धन के तहत लाकर समाजवादी परिवर्तन पूरी तरह न ही सही, बुनियादी तौर पर किया गया। 1958 के महान आगे कदम आन्दोलन के दौरान देश भर में महत्वपूर्ण जन कम्यूनों की स्थापना करते हुए, उद्योगों को मजदूरों के नियन्त्रण में लाकर, पूंजीवादी अधिकार को सीमित करते हुए समाजवादी व्यवस्था को मजबूत बनाकर साम्यवाद की ओर तेजी से कदम बढ़ाने की प्रक्रिया शुरु हो गई।

किन्तु, इस नई ऐतिहासिक दशा के पूरे सिलसिले में वर्ग संघर्ष कई बार तीव्रतम स्तर पर भड़का। पहला, पुरानी व्यवस्था के अवशेषों के खिलाफ, दूसरा, निम्न स्तर की उत्पादन-प्रणाली से पैदा होने वाले नए पूंजीपति वर्ग के खिलाफ और तीसरा, अर्थव्यवस्था को नव जनवादी चरण में ही व्यवस्थित करने की जिद करते हुए, समाजवाद में परिवर्तन का विरोध करने वाले पार्टी के भीतर के संशोधनवादी विचारों के खिलाफ। कॉमरेड माओ ने समाजवादी क्रान्ति के कर्तव्यों को पूरा करने के लिए चीनी कम्युनिस्ट पार्टी और चीनी जनता द्वारा उसके बाद चलाए गए महत्वपूर्ण संघर्षों के दौरान मार्क्सवाद-लेनिनवाद का मजबूती से बचाव करते हुए उसे विकसित किया। चीन और सोवियत रूस की सर्वहारा तानाशाही के ऐतिहासिक अनुभव का बाकायदा आंकलन करते हुए, समाजवादी व्यवस्था में वर्गों और वर्ग संघर्षों का द्वन्द्वात्मक भौतिकवादी सिद्धान्त के नियमों से विश्लेषण करके, सर्वहारा तानाशाही के तहत क्रान्ति को जारी रखने का महत्वपूर्ण सिद्धान्त तैयार किया। उत्पादन के साधनों के प्रबन्धन के समाजवादी परिवर्तन बुनियादी तौर पर पूरा होने के बाद भी लम्बे अरसे तक सर्वहारा और पूंजीपति वर्ग के बीच संघर्ष कायम रहेगा – यह वैज्ञानिक सिद्धान्त माओ ने तैयार किया। उन्होंने समाजवादी व्यवस्था में मौजूद दो तरह के अन्तरविरोधों – जनता और दुश्मन के बीच अन्तरविरोध एवं जनता के बीच अन्तरविरोध का फर्क सही तरीके से पहचान कर, उनसे सही ढंग से निपटने के नियम बनाए।

समाजवादी निर्माण के आर्थिक नियम तैयार करते हुए महान अध्यापक माओ ने कहा कि पूरे दौर में भी सर्वहारा और पूंजीपति वर्ग के बीच का अन्तरविरोध ही प्रधान अन्तरविरोध रहेगा। ***'वर्ग संघर्ष ही महत्वपूर्ण जोड़ है, और बाकी सब उसी पर निर्भर रहते हैं'*** कहते हुए लीशाव-ची के उस तर्क का खण्डन किया, जिसने कहा कि पिछड़े उत्पादन के सम्बन्धों और विकसित उत्पादन के सम्बन्धों के बीच का अन्तरविरोध ही प्रधान अन्तरविरोध है।

कॉमरेड माओ ने इंगित किया कि कम्युनिस्ट पार्टी के भीतर ही सत्ता के पदों पर मौजूद पूंजीवादी राही ही बतौर नए पूंजीपति वर्ग के मुख्यालय के काम कर रहे हैं। किसानों और मजदूरों के बीच, गांवों और शहरों के बीच एवं शारीरिक श्रम और बौद्धिक श्रम के बीच के महत्वपूर्ण अन्तरविरोधों के समाधान की प्रक्रिया भी उन्होंने सुझाई।

अधिरचना के निर्माण में क्रान्ति के लिए कॉमरेड माओ ने महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति की रूपरेखा तैयार की। इस महान सांस्कृतिक क्रान्ति के लक्ष्यों के बारे में उन्होंने यूं बताया : ***''पूंजीवादी राह अपनाने वालों के खिलाफ लड़ना प्रमुख कर्तव्य जरूर है, पर वह अन्तिम लक्ष्य कतई नहीं है। वह संशोधनवाद को जड़ों से उखाड़ फेंक देने की समस्या है ..... केन्द्रीय कमेटी बार-बार जोर देकर कह चुकी है कि जन-समुदायों को जरूर अपने आपको शिक्षित करते हुए मुक्त कर लेना चाहिए। विश्व दृष्टिकोण उन पर थोपा नहीं जा सकता। विचारधारा में परिवर्तन लाने के लिए बाहरी कारकों और अंदरूनी कारकों से काम करने की जरूरत होगी। लेकिन अन्दरूनी कारक ही प्रमुख हैं। यदि सांस्कृतिक क्रान्ति विश्व दृष्टिकोण में परिवर्तन नहीं लाती है, तो क्या उसकी जीत बेमतलब नहीं होगी ? विश्व दृष्टिकोण में परिवर्तन नहीं लाने पर आज के 2000 पूंजीवादी राही कल के दिन 4000 बन जाएंगे।''***

इस विश्व दृष्टिकोण के सवाल को हल करने के लिए ही उन्होंने महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति के दौरान ***''क्रान्ति को समझ लें, उत्पादन को बढ़ाएं'', ''राजनीति को ऊपर रखें'', ''वर्ग संघर्ष कभी मत भूलें''*** आदि नारे दिए। जब पार्टी का सत्ताधारी केन्द्र ही पूंजीपतियों का अड्डा बन गया, तब उन्होंने मुख्यालय को तोड़ने का आव्हान किया। लगभग 10 साल तक चली यह महान क्रान्ति चीन में पूंजीवाद की बहाली को रोक सकी, आर्थिक बुनियाद का क्रान्तिकारीकरण किया एवं संस्कृति, शिक्षा, साहित्य, वैज्ञानिक अनुसन्धान जैसे कई अधिरचना सम्बन्धी मुद्दों का क्रान्तिकारीकरण किया।

कॉमरेड माओ ने न सिर्फ चीनी संशोधनवादियों के खिलाफ, बल्कि कृश्चेव गिरोह के नेतृत्व में अन्तर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट आन्दोलन में सिर उठाने वाले आधुनिक संशोधनवाद के खिलाफ चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में चलाए गये सैद्धान्तिक संघर्ष का नेतृत्व किया। 'महान वितर्क' के नाम से विख्यात इस महान सैद्धान्तिक संघर्ष में माओ ने मार्क्सवाद-लेनिनवाद को गद्दारों के हमलों से बचाया। उस संघर्ष के दौरान ही दुनिया के कई देशों में संशोधनवाद से नाता तोड़कर, चीनी कम्युनिस्ट पार्टी को केन्द्र बनाकर, मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा को बतौर मार्गदर्शक सिद्धांत के स्वीकारते हुए कई सर्वहारा पार्टियां जन्मीं। भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी-लेनिनवादी) (पीपुल्सवार) का उदय भी उसी तरह हुआ।

हालांकि महान अध्यापक माओ की मृत्यु के बाद संशोधनवादी देंग के गद्दार गिरोह ने सत्ता हथियाकर चीन में पूंजीवाद को बहाल करके, माओ विचारधारा के झण्डे तले चीनी जनता द्वारा हासिल

चीनी नव जनवादी क्रान्ति - प्रमुख घटनाएं

19वीं सदी के मध्य से चीन में विदेशी पूंजी की घुसपैठ शुरू हुई। इसके साथ तब तक लगभग दो हजार साल से जारी चीन के सामंती समाज में कुछ प्रमुख फेरबदल हुये, जिससे उसने अर्द्ध-औपनिवेशिक और अर्ध-सामंती राह पकड़ी । साम्राज्यवाद की सामंतवाद से सांठगांठ भी लगभग उसी समय शुरू हुई । लेकिन यह सिलसिला बिना किसी रुकावट के आसानी से नहीं चला । उसे कदम-कदम पर चीनी जनता का प्रतिरोध का सामना करना पड़ा । 1840 के दशक के ब्रितानी साम्राज्यवाद विरोधी अफीम युद्ध से लेकर अक्टूबर, 1949 में अन्तिम विजय पाकर आजाद और स्वाधीन चीनी जन-गणराज्य के गठन तक के 109 सालों में चीनी जनता बेजोड़ बहादुरी, फौलादी संकल्प और अभूतपूर्व बलिदानों से अपना शोषण और उत्पीड़न करने वाले सामंतवाद और साम्राज्यवाद के खिलाफ लगातार क्रान्तिकारी संघर्ष करती रही । एक सदी से ज्यादा अरसा तक चली चीनी नव जनवादी क्रान्ति के दो प्रमुख चरण हैं । 1840 के दशक से 1919 के 4 मई आन्दोलन तक 80 साल चली क्रान्ति पुरानी तरह की बुर्जुवाई जनवादी क्रान्ति थी, जो कि विश्व बुर्जुवाई क्रान्ति का हिस्सा थी।

(पृष्ठ 3 का शेष)

तमाम उपलब्धियों पर पानी फेर दिया, पर वह अस्थाई पराजय ही है । चीनी जनता फिर से माओ विचारधारा का झण्डा ऊंचा उठाकर फिर से जीत हासिल करेगी, इसमें बहुत देर नहीं लगेगी । महान अध्यापक माओ ने दूरगामी नजरिए से यह चेतावनी देते हुए कि समाजवाद और पूंजीवाद के बीच लड़ाई में यह स्पष्ट नहीं हुआ कि अन्तिम विजेता कौन है और चीन में पूंजीवाद की बहाली का खतरा अभी भी कायम है, निश्चयपूर्वक ऐलान किया कि ऐसा ही होगा, तो जनता दोबारा येनान की राह (दीर्घकालीन जनयुद्ध की कार्यदिशा) अपना कर साबित कर देगी कि अन्तिम विजेता समाजवाद ही है । यह बेजोड़ ऐतिहासिक सच्चाई है । अन्तिम जीत माओ विचारधारा की ही होगी ।

इस तरह, चीन के नव जनवादी क्रान्ति के काल में भी और समाजवादी क्रान्ति के काल में भी महान अध्यापक माओ ने मार्क्सवादी दर्शन, राजनीतिक अर्थशास्त्र, वैज्ञानिक समाजवाद, सर्वहारा के संघर्ष के दांव-पेंच आदि सभी क्षेत्रों में मार्क्सवाद-लेनिनवाद को ज्यादा समृद्ध बनाया । उनके द्वारा प्रारूपित सिद्धान्त, उसूल और नीतियां चीनी क्रान्ति के व्यवहार की कसौटी पर खरी उतरीं और यह साबित हो गया कि इन्हें समूची दुनिया में लागू किया जा सकता है ।

चीनी क्रान्ति की कामयाबी की 50वीं वार्षिकी के इस मौके पर, इस क्रान्ति द्वारा विश्व सर्वहारा और उत्पीड़ित जनता को प्रदान की गई माओ विचारधारा के परचम को ऊंचा उठाए रखकर विश्व समाजवादी क्रान्ति को सफल बनाने के लिए कदम बढ़ाने का संकल्प लेंगे ।

*** मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओ विचारधारा अपराजेय है !**

4 मई, 1919 के बाद के समय में चली क्रान्ति नव जनवादी क्रान्ति थी, जो कि सर्वहारा के नेतृत्व में चली । वह विश्व सर्वहारा समाजवादी क्रान्ति का हिस्सा थी ।

क्योंकि .....

अक्तूबर, 1917 में रूस में समाजवादी क्रान्ति सफल हो गई । इस अक्तूबर समाजवादी क्रान्ति ने दुनिया के इतिहास की गति को ही बदलकर एक नये युग की शुरुआत की । उसने पूंजीपतियों के नेतृत्व में चलने वाली पुरानी तरह की क्रान्तियों के युग को समाप्त करके, सर्वहारा के नेतृत्व में विश्व समाजवादी क्रान्ति के तहत चलने वाली नव जनवादी क्रान्तियों (औपनिवेशिक, अर्ध-औपनिवेशिक और सामंदवादी देशों में) का युग लाया । इसीलिये चीनी जनवादी क्रान्ति ने भी उस दिन से एक नये चरण में, नव जनवादी क्रान्ति के चरण में प्रवेश किया ।

पुरानी जनवादी क्रान्ति के काल में (1840-1919) चीनी जनता के संघर्षों में प्रमुख थे -

1. 1840-42 के ब्रितानी साम्राज्यवाद विरोधी अफीम युद्ध,
2. 1850 से 1964 तक चला तइपिंग स्वर्ग-राज्य क्रान्तिकारी युद्ध,
3. 1898 का सुधार आन्दोलन,
4. 1900 के दशक के ई-होटुवान (बॉक्सर) विद्रोह, और
5. 1911 में चली बुर्जुवाई जनवादी क्रान्ति ।

इन तमाम क्रान्तियों को कुचलने में साम्राज्यवादियों ने प्रत्यक्ष भूमिका निभाई । 1840 के दशक के अफीम युद्ध को ब्रितानी साम्राज्यवादियों ने कुचल डाला, जबकि तइपिंग स्वर्ग राज्य युद्ध को चिङ राजशाही सेनाओं के साथ-साथ अमरीकी, ब्रितानी और फ्रान्सीसी सेनाओं ने साझा आक्रमण करके कुचल डाला । 1900 के ई-होटुवान विद्रोह को अमरीकी, ब्रितानी, जर्मन, रूसी, फ्रान्सीसी, इतालवी और ऑस्ट्रियाई साम्राज्यवादियों की साझी सेनाओं ने अकथनीय पाशविकता से कुचल डाला ।

1911 में डॉक्टर सनयेटसेन के नेतृत्व में चलाई गई बुर्जुवाई जनवादी क्रान्ति ने दो हजार सालों से शासन करने वाली तानाशाही, राजशाही सरकार को तो ढहा दिया, लेकिन इस क्रान्ति का संचालन करने वाले पूंजीपति वर्ग ने समझौतावादी प्रवृत्ति का प्रदर्शन करते हुये, सामंती और साम्राज्यवादी ताकतों का दृढ़तापूर्वक मुकाबला करने में विफल होकर, उनके दबाव के आगे झुककर सरकार को सामंती और दलाल पूंजीपति वर्गों को सौंप दिया । इस तरह वह क्रान्ति विफल हो गई ।

नव जनवादी क्रान्ति का चरण

चीन में यह चरण 1919 के 4 मई आन्दोलन के साथ शुरु हो गया । इस आन्दोलन के साथ ही सर्वहारा वर्ग ने अपनी जोरदार

ताकत का प्रदर्शन करना शुरु किया ।

पहले विश्व युद्ध के बाद ही, रूस की अक्तूबर समाजवादी क्रान्ति के बाद ही और 4 मई आन्दोलन के बाद ही चीनी सर्वहारा की ताकत बढ़ने लगी । उसके संघर्षों का दायरा बढ़ने लग गया। मार्क्सवाद-लेनिनवाद ने चीन में प्रवेश किया । महान अध्यापक माओ ने कहा कि *''अक्तूबर क्रान्ति के तोपों की गर्जनायें ही हमारा ध्यान मार्क्सवाद-लेनिनवाद की ओर खींचा। 4 मई आन्दोलन ने चीन के सर्वहारा आन्दोलन को मार्क्सवाद-लेनिनवाद के साथ तेजी से जोड़ा । मार्क्सवाद-लेनिनवाद की सार्वभौमिक सच्चाई के चीनी क्रान्ति के ठोस व्यवहार से एकताबद्ध होने के साथ ही, उसने चीनी क्रान्ति को नई तरह की क्रान्ति में बदल डाला ।''*

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का इतिहास - प्रमुख घटनायें

रूस की अक्तूबर समाजवादी क्रान्ति की जीत ने चीन के कई प्रगतिशील बुद्धिजीवियों को प्रभावित किया । 1918 से चीन के कई हिस्सों में मार्क्सवादी अध्ययन टोलियां बनकर काम करने लग गईं । इन नये विचारों को फैलाने वालों में कामरेड लिता-चावो, चेनटु-शि और कामरेड लूशन प्रमुख थे । लिताचावो के नेतृत्व में पेकिङ में बनी अध्ययन टोली के जरिये ही कामरेड माओ मार्क्सवाद के सम्पर्क में आये थे । ये टोलियां मजदूर आन्दोलनों को व्यापक स्तर पर संगठित करने लगीं । समाजवादी युवा लीगों का गठन किया गया ।

इस तरह समूचे चीन में कार्यरत विभिन्न टोलियों को एकजुट करके चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना करने की ऐतिहासिक जरूरत सामने आई । 1 जुलाई, 1921 को तीसरी इन्टरनेशनल की मदद से चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की पहली राष्ट्रीय (स्थापना) कांग्रेस शंघाई में हुई थी । विभिन्न कम्युनिस्ट ग्रुपों से चुने गये 12 प्रतिनिधियों ने इस कांग्रेस में भाग लिया । कामरेड माओ ने इस कांग्रेस में हुनान राज्य के प्रतिनिधि के रूप में भाग लिया । इस पहली कांग्रेस ने बोलशेविक नमूने के संगठनात्मक नियम तैयार किये । उस तरह चीन में पूरी तरह से नई सर्वहारा पार्टी, लेनिनवादी पार्टी ने जन्म लिया ।

जुलाई, 1922 में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की दूसरी कांग्रेस हुई थी । इस कांग्रेस ने चीनी क्रान्ति के फौरी बुनियादी कर्तव्यों की रूपरेखा तैयार करके असली जनवादी क्रान्ति का कार्यक्रम तैयार किया ।

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की तीसरी कांग्रेस 1923 में कान्टन में हुई । इस कांग्रेस ने साम्राज्यवाद और सामंतवाद का विरोध करने वाले सभी वर्गों, पार्टियों, संस्थाओं और व्यक्तियों से सर्वहारा द्वारा विशाल संयुक्त मोर्चा बनाने की जरूरत को स्वीकारा । चीनी क्रान्ति को चलाने के लिये चीनी कम्युनिस्ट पार्टी और डॉक्टर सनयेटसेन के नेतृत्व वाली क्वोमिन्ताङ पार्टी के बीच सहयोग की बुनियाद पर क्रान्तिकारी संयुक्त मोर्चे का निर्माण करने का प्रस्ताव किया । इसी कांग्रेस में कामरेड माओ केन्द्रीय कमेटी के लिये चुन लिये गये ।

इस तरह तीसरी कांग्रेस तक चीनी कम्युनिस्ट पार्टी संगठनात्मक नियमों, कार्यनीतिक उसूलों और कार्यक्रमों की रूपरेखा तैयार कर सकी । लेकिन इस दौरान जनवादी क्रान्ति में सर्वहारा नेतृत्व, राजसत्ता, किसानों की जमीन की मांग (खेतिहर क्रान्ति), क्रान्तिकारी सेना जैसी समस्याओं पर ध्यान नहीं दे सकी । क्रान्तिकारी आन्दोलन के विस्तार के साथ-साथ इन समस्याओं ने पेचीदा रूप लिया, जिससे पार्टी में दो प्रमुख विपरीत कार्यदिशायें पनपीं । एक लेनिनवादी कार्यदिशा थी, जिसका प्रतिनिधित्व कामरेड माओ ने किया, जबकि दूसरी चेनटु-शि का प्रतिनिधित्व वाली दक्षिणपंथी अवसरवादी कार्यदिशा थी ।

चीनी नव जनवादी क्रान्ति 1924-49 के बीच चार प्रमुख दौरों से गुजरी । (1) महान क्रान्ति का काल या पहले क्रान्तिकारी गृहयुद्ध का काल (1924-27); (2) दूसरे क्रान्तिकारी गृहयुद्ध का काल (1927-37); (3) जापान-विरोधी प्रतिरोधी युद्ध का काल (1937-45); (4) तीसरे क्रान्तिकारी गृहयुद्ध का काल या मुक्ति-युद्ध का काल (1946-49) ।

महान क्रान्ति का काल (पहले क्रान्तिकारी गृहयुद्ध का काल)

डॉक्टर सनयेटसेन ने 1923 में कम्युनिस्ट पार्टी की मदद से क्वांगटुङ क्रान्तिकारी सरकार की स्थापना की ।

जनवरी 1924 में क्वोमिन्ताङ की पहली राष्ट्रीय कांग्रेस कान्टन में सम्पन्न हुई । कामरेड माओ आदि कम्युनिस्ट नेताओं ने इस कांग्रेस में भाग लेते हुये प्रमुख भूमिका निभाई । चूंकि डॉक्टर सन द्वारा बताये तीन नये जन उसूलों का लक्ष्य साम्राज्यवाद और सामंतवाद का विरोध करना एवं सभी क्रान्तिकारी वर्गों से सम्मिलित जनवादी संयुक्त मोर्चा सरकार की स्थापना करना ही था, इसलिये वे बुर्जुवाई जनवादी क्रान्ति के काल में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यक्रम से बुनियादी तौर पर मेल खाने वाले ही थे । कम्युनिस्ट और क्वोमिन्ताङ के सहकार के लिये राजनीतिक आधार ये उसूल ही है ।

1924 में डॉक्टर सन ने सोवियत लाल सेना के नमूने में एक राष्ट्रीय क्रान्तिकारी सेना तैयार करने के लिये सोवियत संघ के सहयोग से और कम्युनिस्ट पार्टी की मदद से कान्टन के निकट वाम्पोवा सैन्य अकादमी की स्थापना की । इस अकादमी में सोवियत की लाल सेना के विशेषज्ञों सहित कामरेड चौएन-लाइ आदि चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेताओं ने भी बतौर प्रशिक्षकों के काम करके राजनीतिक और अन्य गतिविधियां चलाईं । इससे राष्ट्रीय क्रान्तिकारी सेना में कम्युनिस्ट प्रभाव के प्रसार की मजबूत नींव पड़ी । कम्युनिस्ट पार्टी और उसके युवा संगठनों के कई सदस्यों ने इस संस्था से सैनिक प्रशिक्षण प्राप्त किया ।

क्वोमिन्ताङ द्वारा गठित किसान आन्दोलन की अध्ययन संस्था का नेतृत्व करते हुये कामरेड माओ ने अनगिनत कैडरों को किसान आन्दोलन के संचालन में प्रशिक्षित किया । उसमें प्रशिक्षण

पा चुके छात्रों ने बाद में देहाती इलाकों में जाकर जहां–तहां किसान संगठनों को संगठित किया । इन्हीं के प्रयासों का नतीजा है, सुविख्यात हुनान किसान आन्दोलन जिसने 1927 में समूचे चीन को झकझोर कर रख दिया ।

जनवरी 1925 में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की चौथी राष्ट्रीय कांग्रेस सम्पन्न हुई । खेतिहर क्रान्ति का कार्यक्रम सामने लाने में वह भी नाकामयाब रही ।

12 मार्च, 1925 को डॉक्टर सनयेटसेन की मृत्यु उनके अविश्रान्त क्रान्तिकारी कार्य के चलते तबियत बिगड़ने से हुई । उनके बाद साम्राज्यवादियों का भाड़े का टट्टू च्याङ काइ–शेक ने क्वोमिन्ताङ पार्टी का नेतृत्व पर कब्जा जमाया । इस दिन से उसने साम्राज्यवादियों के समर्थन व सहयोग से युद्ध–पतियों को एकजुट कर प्रतिक्रियावादी क्रान्ति के लिए तेजी से तैयारियां करते हुए कम्युनिस्ट पार्टी और मजदूर–किसान आन्दोलनों पर किसी न किसी बहाने से बारम्बार हमले किए । चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का नेतृत्व सम्भाले हुए चेन टु–शी इन हमलों का प्रतिरोध करने के बजाए नंगी दक्षिणपंथी अवसरवादी कार्यदिशा अपनाते हुए उसे रिआयत–दर–रिआयत देता गया, जिससे उसका रोबदाब और भी बढ़ गया । आखिर 12 अप्रैल, 1927 को च्याङ काई–शेक खुलकर प्रतिक्रान्ति पर उतरते हुए शंघाई सहित कई जगहों पर कम्युनिस्टों का कत्लेआम किया और मजदूर – किसान आन्दोलनों का पाशविक दमन किया ।

दूसरी ओर, क्वोमिन्ताङ के अन्दर मौजूद वाम गुट ने कम्युनिस्ट पार्टी के साथ सहयोग को जारी रखा । जुलाई 1926 में राष्ट्रीय क्रान्तिकारी सेना ने देश के उत्तरी क्षेत्र में स्थित युद्ध–पतियों को परास्त करके समूचे देश को एकजुट करने के लिए उत्तरी आक्रमण मुहिम चलाई । आधे साल के भीतर ही हूनान, होपे आदि राज्यों के युद्ध–पतियों को हराते हुए यांग्सी की घाटी तक आगे बढ़ी । कम्युनिस्ट सरकार की स्थापना की ।

इस मुहिम के साथ ही देश भर में किसान विद्रोह उमड़ पड़े। छूनान में चला किसान आन्दोलन देशव्यापी किसान आन्दोलन का केन्द्र बन गया । किसानों ने जहां–तहां बगावतें करके अपने गांवों में क्रान्तिकारी सत्ता कायम की । 'सभी अधिकार किसान संगठन को' का नारा चारों तरफ गूंज उठा । गरीब किसान और खेतिहर मजदूर ही इस आन्दोलन की रीढ़ थे ।

इससे जमींदारों, बुरे मुखियाओं और उत्तरी मुहिम की सेना में मौजूद प्रतिक्रियावादियों ने इस आन्दोलन पर हायतौबा मचाई। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी में मौजूद दक्षिणपंथी अवसरवादियों ने भी इसमें सुर मिलाया ।

15 जुलाई, 1927 को वूहान में वाङचिङ–वि के नेतृत्व वाले क्वोमिन्वाङ के गुट ने क्रान्ति से गद्दारी की । मजदूर और किसान संगठनों पर मनाही लगा दी । कई कम्युनिस्टों और बाकी क्रान्तिकारियों का कत्लेआम किया । इस तरह 12 अप्रैल और 15 जुलाई के जनसंहारों के साथ ही पहला क्रान्तिकारी गृहयुद्ध विफलता से समाप्त हो गया ।

1924–27 का युद्ध चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में चीनी जनता द्वारा चलाया गया पहला साम्राज्यवाद विरोधी और सामंतवाद विरोधी क्रान्तिकारी युद्ध था ।

इस क्रान्तिकारी युद्ध की विफलता का पहला कारण साम्राज्यवादियों, युद्धपतियों और क्वोमिन्ताङ के प्रतिक्रियावादियों की ताकत क्रान्तिकारी शक्तियों की ताकत के मुकाबले ज्यादा रहना था, जबकि दूसरा कारण पार्टी के नेतृत्व की दक्षिणपंथी अवसरवादी गलतियां था ।

पार्टी के अन्दर दक्षिणपंथी समर्पणवादियों का नेता चेन–टुशि ने कॉमरेड माओ द्वारा सामने लाए गए सही विचारों को दबाकर रखा । इतना ही नहीं, पार्टी की पांचवी कांग्रेस में अवैध तरीके से कॉमरेड माओ को मताधिकार से वंचित करके नेतृत्व से अलग कर दिया ।

इस दौरान कॉमरेड माओ ने पार्टी के भीतर गलत रुझानों के खिलाफ धैर्यपूर्ण सैद्धांतिक संघर्ष किया । मार्च 1926 में उन्होंने 'चीनी समाज में वर्ग–विश्लेषण' और मार्च 1927 में 'हूनान का किसान आन्दोलन : एक जांच रिपोर्ट' नामक लेख लिखे ।

इन लेखों में कॉमरेड माओ ने मार्क्सवादी–लेनिनवादी दृष्टिकोण तथा रवैए और तरीके पर निर्भर रहते हुए, उपनिवेशों में राष्ट्रीय क्रान्ति से सम्बंधित लेनिनवादी सिद्धान्त पर निर्भर रहते हुए पहले क्रान्तिकारी युद्ध के अनुभव का निचोड़ निकाल कर नव जनवादी क्रान्ति से सम्बन्धित मूलभूत नियम बनाए वे हैं :

1. आधुनिक चीन में जनवादी क्रान्ति को सर्वहारा के नेतृत्व में गठित संयुक्त मोर्चा ही पूरा कर सकता है ।
2. सर्वहारा के नेतृत्व में चलने वाली जनवादी क्रान्ति में प्रमुख समस्या किसानों की समस्या ही है । क्रान्ति तभी सफल होगी जब किसान को मित्र बना लेती हो ।
3. चीनी क्रान्ति का प्रमुख रुप हथियारबन्द प्रतिक्रान्ति के खिलाफ हथियारबन्द क्रान्ति ही हो सकता है । बिना क्रान्तिकारी सेना के कुछ भी सम्भव नहीं है ।
4. पूरी जनवादी क्रान्ति की जीत में यही महत्वपूर्ण हैं ।

पहले क्रान्तिकारी गृहयुद्ध ने मजदूर – किसानों के असीमित जन–समुदायों पर बेहद असर डाला । हथियारबन्द सेनाओं का एक हिस्सा कम्युनिस्ट पार्टी के नियन्त्रण में लाया । क्वोमिन्ताङ सहित साम्राज्यवादियों, जमींदारों और दलाल पूंजीपति वर्गों के प्रगति विरोधी चरित्र को और राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग के दोहरे चरित्र को उजागर कर दिया । और वह दूसरे क्रान्तिकारी युद्ध की नींव चाल सका ।

दूसरे क्रान्तिकारी गृहयुद्ध का काल (1927-37)

1927–37 के बीच बेहद प्रतिक्रियावादी समय के दौरान चीनी कम्युनिस्ट पार्टी अपने वजूद को बचाने में सफल रही । इस दौरान जहां एक ओर दुश्मन ने क्रान्तिकारी ताकतों और पार्टी का पूरी

तरह उन्मूलन करने के इरादे से अनगिनत सैनिक हमले किए , वहीं दूसरी ओर, चेन-टूशि के दक्षिणपंथी अवसरवाद से उबरने वाली पार्टी वामपंथी अवसरवाद के चंगुल में फंस गई और बुरी तरह क्षतिग्रस्त हो गई। चाङ कुवो-टाओ की समर्पणवादी कार्यदिशा के चलते पार्टी को बेहद नुकसान उठाना पड़ा। ठीक उसी समय पार्टी ने महान प्रतिभाशाली और भरोसेमंद नेता के रूप में कॉमरेड माओ को स्वीकारा। उनकी अगुआई में नए नेतृत्व की स्थापना हुई।

कॉमरेड माओ के नेतृत्व में देहाती इलाकों में दीर्घकालीन जनयुद्ध के रास्ते में क्रान्ति शुरु हुई। देहाती इलाकों में आधार - क्षेत्रों की स्थापना करके, उन्हे मजबूत बनाकर, विस्तारित करते हुए आखिर में शहरों को जोकि दुश्मन के मजबूत अड्डे हैं, घेरकर कब्जा कर लेना - क्रान्ति के विकास के लिए यही एक मात्र रास्ता मानते हुए पार्टी ने लाल सेना और क्रान्तिकारी आधार-क्षेत्रों का निर्माण किया। क्रान्तिकारी युद्ध और खेतिहर क्रान्ति का संचालन करना और राजसत्ता कायम करना सीख लिया।

इस दौरान हुई प्रमुख घटनाएं :

<u>नांचाङ विद्रोह :</u> 1 अगस्त, 1927 को कॉमरेड चौ एन-लाइ और चूटे की कमान में कियांग्सी के नांचाङ में 30 हजार लोगों ने विद्रोह किया। पांच दिनों तक शहर को कब्जे में लेकर, फिर क्वाङटुङ राज्य में जाकर ये सेनाएं पराजित हुईं। इनमें से बचे बलों को कॉमरेड चूटे ने चिंकाङ पहाड़ों की ओर चलाकर कॉमरेड माओ के नेतृत्व में वहां मौजूद सेनाओं में मिलाया। इस तरह मजदूर-किसानों की लाल सेना की नई चौथी सेना का गठन हो गया। 1 अगस्त को जन सेना का स्थापना-दिवस के रूप में मनाया जाता है।

शरत्कालीन फसलों का विद्रोह - चिंकाङ में आधार - क्षेत्र की स्थापना

यह सितम्बर 1927 में कॉमरेड माओ के नेतृत्व में हूनान राज्य में हुआ था। जनता के हथियारबन्द बलों ने इस विद्रोह में भाग लिया। यह विद्रोह विफल हो गया। उसके बाद कॉमरेड माओ ने अपनी सेनाओं को मजदूर-किसानों की लाल सेना में पुर्नगठित करके सेना में पार्टी प्रतिनिधि-व्यवस्था कायम की। सेना की सर्वाधिकारी नेतृत्व-संस्था के रूप में पार्टी फ्रन्ट कमेटी की स्थापना की। उसके बाद कॉमरेड माओ ने पूर्व योजना के मुताबिक इन सेनाओं को हूनान-कियांग्सी राज्यों की सीमा पर स्थित चिंकाङ के पहाडों में ले जाकर वहां आधार-क्षेत्र का निर्माण किया।

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की छठीं कांग्रेस

यह जुलाई 1928 में सम्पन्न हुई। इसने स्पष्ट किया कि 1927 की क्रान्ति की नाकामयाबी के बाद चीनी क्रान्ति ने साम्राज्यवाद विरोधी और सामंतवाद विरोधी चरण में प्रवेश किया। इसने आग्रह किया कि चूंकि क्रान्ति का उफान जल्दी आने का कोई आसार नहीं है, इसलिए जनता को क्रान्ति के लिए सिलसिलेवार गोलबन्द किया जाए। इस कांग्रेस ने चेन-टुशि की दक्षिणपंथी समर्पणवादी नीति का उन्मूलन कर दिया। 1927 के अन्त में और 1928 की शुरुआत में सिर उठाने वाली वामपंथी प्रवृत्तियों को खत्म कर दिया। पर देहाती आधार-क्षेत्रों के महत्व को पहचानने में विफल रही। वामपंथी कार्यदिशा की मार्क्सवादी-लेनिनवादी दृष्टिकोण और तरीके से आलोचना करने में विफल हो गई। इन कमियों की वजह से और कांग्रेस के बाद नेतृत्व वामपंथियों के हाथों में रह जाने की वजह से वामपंथी अवसरवाद ने बाद में पूरी तरह गलत कार्यदिशा का रुप लेकर क्रान्ति को बेहद नुकसान पहुंचाए।

आधार-क्षेत्र, दीर्घकालीन जनयुद्ध की कार्यदिशा और छापामार युद्ध :

इस कांग्रेस के बाद कॉमरेड माओ ने चीनी क्रान्ति की उन प्रमुख समस्याओं, जिन्हें कांग्रेस ने या तो अनसुलझा छोड़ दिया या फिर गलत ढ़ंग से सुलझाया, को सैद्धान्तिक और व्यावहारिक तौर पर सही ढ़ंग से हल कर दिया।

हूनान-कियांग्सी सीमान्त क्षेत्र की पार्टी की दूसरी कांग्रेस में 5 अक्टूबर, 1928 को उनके द्वारा पेश की गई रिपोर्ट ''चीन में लाल राजसत्ता कैसे कायम रह सकेगी?'' मे भी; 25 नवम्बर, 1928 को चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी को भेजी उनकी रिपोर्ट ''चिंकाङ पहाड़ों में संघर्ष'' में भी और 5 जनवरी, 1930 को लिखा गया पार्टी-पत्र ''एक छोटी सी चिनगारी पूरे जंगल को जला सकती है'' में भी उन्होंने चीनी क्रान्ति के विकास के नियमों को विस्तारपूर्वक बताया। उन्होंने दीर्घकालीन जनयुद्ध की कार्यदिशा पेश की जिसका सारंश है कि क्रान्तिकारी बलों को देहाती इलाकों में ले जाकर वहां आधार-क्षेत्रों का निर्माण कर, उन्हें मजबूत बनाकर, विस्तारित करते हुए आखिर में शहरों जो कि दुश्मन का मजबूत केन्द्र हैं, को घेरकर उन पर कब्जा किया जाए। इन्होंने लाल सेना के निर्माण के बुनियादी नियमों और लाल सेना की रणनीति और कार्यनीति को विकसित किया। उन्होंने छापामार युद्ध के नियमों की रुपरेखा तैयार की।

कॉमरेड माओ द्वारा प्रारुपित इन नीतियों का अनुसरण करते हुए 1930 तक छ: आधार-क्षेत्रों की स्थापना की गई। इन्हें मजबूत बनाया गया। चीनी मजदूर-किसानों की लाल सेना निर्मित की गई। इन आधार-क्षेत्रों में हूनान-कियांग्सी सीमांत क्षेत्र केन्द्रीय आधार-क्षेत्र है। इन क्षेत्रों में मजदूर-किसान-सैनिकों के सोवियतों के रूप में जनता की जनवादी सरकार कायम की गई। इस दौरान च्याङ काइ-शेक द्वारा चलाए गए 'घेरा डालो और विनाश करो के चार हमलों का सफल मुकाबला किया गया। 7 नवम्बर, 1931 को केन्द्रीय आधार-क्षेत्र के जुय-चिन में मजदूर - किसान - सैनिकों का पहला राष्ट्रीय अधिवेशन आयोजित कर चीनी मजदूर-किसानों की केंद्रीय जनवादी सरकार की स्थापना की घोषणा की गई। कॉमरेड माओ को सरकार को अध्यक्ष और कॉमरेड चूटे को लाल सेना के सर्वोच्च कमांडर चुन लिया गया।

वाङमिङ की वामपंथी कार्यदिशा

यह कार्यदिशा 31 जनवरी, 1931 को हुई केन्द्रीय कमेटी की चौथी प्लीनम से जनवरी, 1935 की सुनइ बैठक तक पार्टी में छाई रही । इस कार्यदिशा के समर्थकों का तर्क था कि समूचे देश में क्रान्ति का उफान अभी भी बढ़ रहा है । उन्होंने पार्टी पर दबाव डाला कि देशव्यापी प्रत्याक्रमण छेड़ दिया जाए। मजदूर-किसानों के शासन में धनी किसानों और राष्ट्रीय पूंजीपतियों को कोई भी अधिकार नहीं देने की बात की । मध्यम श्रेणी के वर्गो के वजूद को नकार दिया । आधार-क्षेत्रों में अमल हो रही सैनिक लाइन का विरोध किया । मोर्चाबन्द युद्ध को महत्व देते हुए '' लाल इलाकों में एक इन्च जमीन भी दुश्मन के हवाले न होने दी जाए'' का नारा दिया । ऐसी वामपंथी कार्यदिशा की वजह से चीनी क्रान्ति ने भारी नुकसान उठाए। चियाङ कई-शेक के घेरा डालने और विनाश करने के पांचवे हमले को पराजित करने में विफल हो गई । इस कार्यदिशा के चलते चीनी कम्युनिस्ट पार्टी, लाल सेना और आधार-क्षेत्र-इन तीनों में 90 प्रतिशत का नुकसान हो गया । चीनी क्रान्ति की प्रगति को धक्का लगा । इस वामपंथी अवसरवादी कार्यदिशा की सैन्य गलतियों की आलोचना करते हुए, दूसरे क्रान्तिकारी गृहयुद्ध के अनुभव की समीक्षा करते हुए कॉमरेड माओ ने दिसम्बर, 1936 में 'चीनी क्रान्तिकारी युद्ध की रणनीतिक समस्याएं' शीर्षक लेख लिखा ।

दीर्घ यात्रा

चीनी मजदूर-किसानों की लालसेना ने 1934 में सारी दुनिया को हक्का बक्का कर देने वाली दीर्घ यात्रा (लांग मार्च) की रणनीति तैयार की ताकि चियाङ काई-शेक के घेरा डालकर विनाश करने के 5वें हमले को तोड़कर उससे बाहर आ सके और नई जीतों को हासिल किया जा सके । 12 हजार किलोमीटर लम्बी यह दीर्घ यात्रा लाल सेना ने कियांग्सी राज्य से उत्तरी शेन्सी राज्य तक की । अक्टूबर , 1934 में चीनी मजदूर - किसानों की लाल सेना के पहले, तीसरे और पांचवें विभागों (केन्द्रीय लाल सेना) ने पश्चिमी प्यूकियुन राज्य के चांग टिंग, निङहुवा से और दक्षिण सियांग्सी के जुयचिन, यूटु आदि इलाकों से बड़े पैमाने पर रणनीतिक स्थान-परिवर्तन शुरु किया । इस दीर्घ यात्रा में लाल सेना11 राज्यों से गुजरी । बारहों महीना बर्फ से ढके रहने वाले पर्वतों, बेअन्त घास के मैदानों, पर्वतों की सीधी चोटियों और उफनती नदियों को उसने पार किया और अनगिनत मुशकिलें झेलीं । बार-बार दुश्मन द्वारा की गई घेराबन्दियों, बाधाओं और हवाई हमलों का मुकाबला किया । लाल सेना के हजारों योद्धा इस यात्रा में दुश्मन से लड़ते हुए धराशायी हुए । इन तमाम मुश्किलों और नुकसानों को झेलकर लाल सेना अक्टूबर, 1935 में उत्तरी शेन्सी का आधार-क्षेत्र पहुंच गई ।

सुनइ बैठक

जनवरी, 1935 में क्विचौ राज्य के सुनइ में हुई चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के पोलिटिकल ब्यूरो की ऐतिहासिक विस्तृत बैठक ने न सिर्फ चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के इतिहास में, बल्कि विश्व के कम्युनिस्ट आन्दोलन के इतिहास में एक नया पन्ना जोड़ दिया । इसी बैठक मे चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने वामपंथी और दक्षिणपंथी अवसरवादी कार्यदिशाओं का उन्मूलन करके उस लेनिनवादी कार्यदिशा को, जिसका प्रतिनिधित्व कामरेड माओ ने किया और जो कि उसके बाद माओ विचारधारा में तबदील हो गई, बतौर अपने मार्गदर्शक सिद्धान्त के स्वीकार किया । कॉमरेड माओ को चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का अध्यक्ष और मिलिटरी कमिशन का अध्यक्ष चुन लिया गया । उस दिन से उनके द्वारा तैयार की गई दीर्घकालीन जनयुद्ध की कार्यदिशा का अनुसरण करते हुए चीनी कम्युनिस्ट पार्टी भारी नुकसानों से उबरकर कामयाबी पर कामयाबी हासिल करती गई ।

जापान का दुराक्रमणकारी युद्ध

18 सितम्बर को पूर्वोत्तरी चीन में रुकी हुई जापानी सेनाओं ने शेन यांग (मुगदेन) पर सहसा आक्रमण कर दिया । जापानी सेना का प्रतिरोध नहीं करने के चियाङ काइ-शेक के आदेशों के मुताबिक चीनी सेना महान दीवार की दक्षिणी दिशा में पीछे हट गई। इससे जापान ने तीन महीने में ही समूचे पूर्वोत्तरी चीन का कब्जा किया । 15 अप्रैल, 1932 में चीनी मजदूर-किसानों की जनवादी (सोवियत) केन्द्रीय सरकार ने जापान के खिलाफ युद्ध की घोषणा की । लाल सेना और जनता से आह्वान किया कि जापान विरोधी प्रतिरोधी युद्ध चलाया जाए ।

सियान घटना

चीन की लाल सेना द्वारा चलाए गए जापान विरोधी जन आन्दोलन के प्रभाव के परिणामस्वरुप, जनरल चाङसु-लियाङ के नेतृत्व वाली पूर्वोत्तर चीन की क्वोमिन्ताङ सेना और याङ हु चेंग के नेतृत्व की क्वोमिन्ताङ की 17वीं राह-सेना ने कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा प्रस्तावित संयुक्त मोर्चो कार्यक्रम का अनुमोदन किया । (चियाङ काइ-शेक ने इन सेनाओं को शेनसी-कानसु-निङसिया सीमांत क्षेत्र पर हमले के लिए भेजा) इन सेनाओं ने लाल सेना के खिलाफ अपनी कार्रवाइयां बन्द कर दीं । इन सेनाओं ने चियाङ कइ-शेक से आग्रह किया कि जापान का प्रतिरोध करने के लिए कम्युनिस्ट पार्टी से सहयोग करे । उससे वह बौखला गया और खुद सियान आया ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि ये सेनाएं 'कम्युनिस्टों के दमन' कार्यक्रम में शामिल हो जाएं । 12 दिसम्बर, 1936 को चाङ सु-लियाङ और याङ हु-चेंग की सेनाओं ने उसे गिरफ्तार कर लिया । उस पर दबाव डाला गया कि वह कम्युनिसट पार्टी से एकजुट हो जाए । कम्युनिस्ट पार्टी ने इस मांग से का समर्थन किया । अंतत: चियाङ काइ-शेक को तब छोड़ा गया जब उसने इस एकता प्रस्ताव को मान लिया । 1937 में देशव्यापी विशाल जापान विरोधी संयुक्त मोर्चा गठित हो गया । गृहयुद्ध समाप्त हो गया ।

जापान विरोधी प्रतिरोध युद्ध का काल (1937-1945)

जापान विरोधी प्रतिरोध युद्ध में आई अनगिनत मुश्किलों और पराजयों के बावजूद , जापान विरोधी चीनी जन बल विकसित हुए । विकास, क्षीणता और फिर विकास नामक तीन चरणों से

गुजरे । सर्वहारा , किसान, शहरी निम्न पूंजपति और राष्ट्रीय पूंजीपति वर्गों से तथा जमींदार व दलाल पूंजीपतियों में से एक तबके से बना विशाल संयुक्त मोर्चे के प्रयासों से चीनी जनता ने चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में 2 सितम्बर, 1945 तक इस युद्ध में अन्तिम जीत हासिल की ।

जटिल स्थितियों को नजर में रखकर चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी और कॉमरेड माओ द्वारा बनाई गई सही राजनीतिक व मिलिटरी कार्यदिशाओं का पूरी पार्टी, सेना और मुक्त इलाकों की जनता ने अनुसरण किया । जीत हासिल करने के लिए संयुक्त मोर्चे में सर्वहारा की आजादी और पहलकदमी को बनाए रखना, प्रगतिशील ताकतों को विकसित कर लेना, मध्यममार्गियों को क्रान्ति की ओर जीत लेना, अड़ियल तत्वों को अलग-थलग कर देना - इस मार्क्सवादी- लेनिनवादी उसूल पर अमल किया । दुश्मन की पांतों के पीछे छापामार युद्ध को विस्तृत तौर पर बढ़ाया, जापान विरोधी सशस्त्र बलों की वृद्धि की । परिणामस्वरुप 1937 में जापान विरोधी प्रतिरोध युद्ध जब शुरु हुआ लाल सेना की संख्या 40 हजार थी, जबकि 1945 में जापान ने घुटने टेक दिए तब तक वह 10 लाख सैनिकों वाली महान सेना बनी थी । जन मिलीशिया की संख्या 22 लाख तक पहुंच गई और आत्मरक्षा दस्तों के सदस्यों की संख्या 1 करोड़ हो गई । देश भर में 19 मुक्त इलाके बनाए गए । इनका क्षेत्रफल 9 लाख 55 वर्ग किलोमीटर था और आबादी 9 करोड़ 55 लाख ।

उसी समय महान अध्यापक माओ ने सर्वहारा के सैन्य-विज्ञान को व्यापक रुप देते हुए कई लेख लिखे । छापामार युद्ध में अनुसरण किए जाने वाले 'बुनियादी दांव पंच' के बारे में 1937 में एक लेख लिखा । छापामार युद्ध का रणनीतिक स्तर पर विश्लेषण करते हुए उन्होंने 1937 में 'छापामार युद्ध' और मई, 1938 में 'जापान विरोधी छापामार युद्धः रणनीतिक समस्याएं' शीर्षक लेख लिखे । दीर्घकालीन जनयुद्ध की विस्तार से चर्चा करते हुए उन्होंने मई, 1938 में 'दीर्घकालीन जनयुद्ध' शीर्षक लेख लिखा ।

जनवरी 1940 में कॉमरेड माओ ने एक महत्वपूर्ण, ऐतिहासिक और जुझारु रचना 'नव जनवाद' लिखी । औपनिवेशक और अर्ध-औपनिवेशिक देशों में क्रान्ति पर लेनिनवादी सिद्धान्त की रोशनी में और चीनी क्रान्ति के अनुभवों के आधार पर चीनी क्रान्ति के बुनियादी नियमों (गति के नियमों) का उन्होंने गहराई से विश्लेषण किया । इसमें उन्होंने जो नियम तैयार किए, वे न सिर्फ चीन में बल्कि तमाम औपनिवेशिक , अर्ध-औपनिवेशिक और अर्ध-सामंती देशों में लागू होने वाले सार्वभौमिक नियम हैं ।

अप्रैल, 1945 में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की 7 वीं राष्ट्रीय कांग्रेस सम्पन्न हुई । पार्टी की संशोधित नई नियमावली में जोर देकर कहा गया कि पार्टी की प्राथमिक राजनीतिक व संगठनात्मक कार्यदिशा जनदिशा हो । व्यवहार में जनदिशा को लागू करने के लिए कई बुनियादी उसूल पेश किए गए । इस कांग्रेस में नई नियमावली का अनुमोदन किया गया जिसने मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त को चीनी क्रान्ति के व्यवहार से जोड़ने वाली माओ विचारधारा को पार्टी के पूरे काम के लिए मार्गदर्शक सिद्धान्त के तौर पर स्वीकारा। इस तरह उसने मार्क्सवाद-लेनिनवाद के विकास में नए चरण के तौर पर माओ विचारधारा को स्वीकारा ।

तीसरे क्रान्तिकारी गृहयुद्ध (मुक्ति-युद्ध) का काल (1946-49)

जुलाई, 1946 मे चियाङ काइ-शेक के गिरोह ने दुनिया की सबसे शक्तिशाली साम्राज्यवादी ताकत अमरीका की मदद से अभूतपूर्व ढ़ंग से बड़े पैमाने पर प्रतिक्रान्तिकारी गृहयुद्ध छेड़ दिया । चीनी जनता ने चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में चार साल तक शूरतापूर्ण लड़ाई लड़कर साम्राज्यवादियों और क्वोमिन्ताङ के प्रतिक्रियावादी शासन को ढहा दिया । 1 अक्टूबर, 1949 को जनता की जनवादी तानाशाही के मातहत चीनी जन-गणराज्य की स्थापना की । कॉमरेड माओ के नेतृत्व में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने मार्क्सवाद-लेनिनवाद की सार्वभौमिक सच्चाई को चीनी क्रान्ति के ठोस हालात में लागू करते हुए सही नीतियां बनाईं । परिणामस्वरुप प्रतिकुल हालात से अनुकूल हालात पर पहुंच गई । चीनी नवजनवादी क्रान्ति को सफलतापूर्वक पूरा किया गया ।

1946 के जून माह के आखिर में दुश्मन ने सभी दिशाओं से बड़े पैमाने पर आक्रमण किया, तो जन मुक्ति सेना ने आत्मरक्षात्मक नीति अपनाई । जुलाई, 1946 से फरवरी, 1947 तक आठ माह तक चली लड़ाई के बाद दुश्मन के आक्रमण पर रोक लगा सकी । इससे 5 मार्च 1947 से दुश्मन ने सभी दिशाओं से आक्रमण की नीति को त्यागकर केन्द्रीकृत आक्रमण की नीति अपनाई । जनमुक्ति सेना जहां-तहां उन हमलों को नाकाम कर सकी । जून,1947 तक दुश्मन को आत्मरक्षा की स्थिति में जाने पर मजबूर होना पड़ा, जबकि जनमुक्ति सेना रणनीतिक प्रत्याक्रमण की तैयारी कर सकी ।

1947 के जुलाई माह से जनमुक्ति सेना ने रणनीतिक प्रत्याक्रमण किया। युद्ध के तीसरे साल (1948) में युद्ध की हालत में एक और बुनियादी बदलाव आया । जनमुक्ति सेना द्वारा चलाए गए तीन बहुत बड़े सैन्य अभियानों,लि यावो शि-शेन्यायांग अभियान, हुय-हुय अभियान और पेकिङ-टिएनसिन अभियान, के फलस्वरुप चीनी क्रान्ति की देशव्यापी विजय सुनिश्चित हो गई।

21 अप्रैल, 1949 को चीन जनमुक्ति सेना ने यांगसी नदी को पार करके समूचे चीन को मुक्त कराने के लिए पश्चिमोत्तर दिशा में प्रस्थान किया । 1949 के अन्त तक टिबेट और ताइवान को छोड़कर समूचा चीन आजाद हो गया ।

1 अक्टूबर, 1949 को कॉमरेड माओ ने चीनी जन गणराज्य के गठन की घोषणा की ।

नव जनवादी क्रान्ति का चरण समाप्त-समाजवादी क्रान्ति का चरण (1949-56)

1 अक्टूबर, 1949 को अन्तिम जीत हासिल कर चुकी चीनी जनता ने सामंतवाद, साम्राज्यवाद और नौकरशाही दलाल पूंजीवाद को चीन की धरती से मार भगा दिया । चार क्रान्तिकारी वर्गों से सम्मिलित और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व तले चलने वाली

नव जनवादी तानाशाही सरकार की स्थापना की । इस बीच जून, 1950 में अमरीकी साम्राज्यवादियों ने कोरिया पर दुराक्रमणकारी हमला किया । अमरीका का सातवें नौसेना दस्ते ने ताईवान पर हमला किया जोकि चीन का हिस्सा था । उसके बाद पूर्वोत्तर चीन की सीमा को अपने हमलों का निशाना बनाया । चीनी जनता ने अपने देश की रक्षा के लिए कमर कसकर अमरीका का प्रतिरोध कर कोरिया की मदद करने का आन्दोलन छेड़ दिया । चीनी जनता की वॉलन्टरी सेनाओं ने कोरियाई सेनाओं से मिलकर अमरीका के खिलाफ लड़ा । जुलाई 1953 तक अमरीका को पूरी तरह परास्त कर दिया । 1952 के अन्त तक देश भर में भूमि सुधारों पर अमल करके 30 करोड़ किसानों को 70 करोड़ 'मू' जमीन बांट दी गई। साम्राज्यवादी और दलाल नौकरशाही उद्योगों और व्यापार को जब्त करके समाजवादी औद्योगिक क्षेत्र की बुनियाद डाली गई । उसके बाद समाजवादी परिवर्तन का प्रयास करते हुए कृषि और दस्तकारी के क्षेत्रों में सहकार संघों का गठन किया गया । निजी पूंजीवादी उद्योगों और व्यापार को इस्तेमाल करने, नियन्त्रित करने एवं खरीद डालने की सिलसिलेवार प्रक्रिया के जरिए समाजवादी मलकियत के तहत लाया गया। जून 1956 तक चीन के 91.7% किसानी भूखण्ड सहकार संघों में संगठित किए गए । पूंजीवादी उद्योग और व्यापार में एवं निजी दस्तकारी उद्योग में लाए गए समाजवादी परिवर्तन के चलते बड़े और मध्यम शहरों में स्थित निजी उद्योग और व्यापार को सरकारी–निजी साझे क्षेत्र के तहत लाया गया ।

इस तरह 1956 के आखिर तक चीन में समाजवादी परिवर्तन पूरी तरह न सही, बुनियादी तौर पर पूरा हो गया । ❖

भारत की कम्युनिस्ट पार्टी को सन्देश

कॉमरेड रणदिवे !

12 अक्टूबर का आपका बधाई तार पहुंच गया । चीनी जन गणराज्य और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी को तहेदिल से बधाई देने के लिए आपका बहुत-बहुत शुक्रिया । आपके तार के जरिए भारत की जनता द्वारा व्यक्त की गई भाईचारा और स्नेह की भावनाओं को पढ़कर चीनी जनता बेहद खुश होगी। भारत की जनता समूचे एशियाई महाद्वीप के महान जन-समुदायों में से एक है । उनका लम्बा इतिहास है । विशाल आबादी है । भारत के अतीत और भविष्य में तथा चीन के अतीत और भविष्य में काफी समानताएं हैं। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि बहादुर भारत की कम्युनिस्ट पार्टी और भारत के कई और देशभक्तों की एकता और शूरतापूर्ण लड़ाइयों पर निर्भर रहते हुए, भारत साम्राज्यवादियों और उनके दलालों के लौह पैरों तले ज्यादा दिन नहीं रहेगा । एक न एक दिन, ठीक चीन की ही तरह, भारत भी समाजवाद और जनवाद के महान परिवार में सदस्य बनकर दुनिया में उभरेगा । उस दिन मानव जाति के इतिहास में साम्राज्यवाद और प्रतिक्रियावाद के युग को स्थाई तौर पर दफना दिया जाएगा । हम बेहद आशावान हैं कि भारत की देशभक्त जनता के शूरतापूर्ण साझे संघर्ष सफल हों । भारत और चीनी जनता की भाईचारापूर्वक एकता जुग-जुग जिए !

माओ,
अध्यक्ष, चीनी कम्युनिस्ट पार्टी,
19 नवंबर, 1949

''असली फौलादी गढ़ क्या है ? वह जनता ही है । क्रान्ति का सचमुच और ईमानदारी से समर्थन देने वाली लाखों-करोड़ों जनता ही असली फौलादी गढ़ है । इस फौलादी गढ़ को कोई भी ताकत नहीं तोड़ सकेगी । चाहे वह ताकत कितनी मजबूत भी क्यों न हो, उसका कुछ भी नहीं बिगाड़ सकेगी।''

(आम जनता के कल्याण पर ध्यान दो)

जनदिशा

(महान अध्यापक माओ ने जनदिशा को कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा अपने काम-तरीके में अपनाए जाने वाले बुनियादी नियमों से एक के रूप में विकसित किया। 'जनता ही इदिहास का निर्माता है' और 'जनता अपनी मुक्ति खुद ही कर लेगी' - मार्क्सवाद-लेनिनवाद के इन बुनियादी उसूलों के आधार पर कॉमरेड माओ यह जनदिशा तैयार की जिसका सारांश 'जनता से लेकर जनता को लौटाना' है। उन्होंने बार-बार यह बात जोर देकर कही कि 'कम्युनिस्टों को हर काम जनता के हितों को मद्देनजर रखकर शुरु करना चाहिए।' जन दिशा पर महान अध्यापक की रचनाओं से कुछ अंश यहां नीचे प्रस्तुत किए जा रहे हैं।)

हमारी पार्टी के समूचे व्यवहार में सही नेतृत्व का विकास 'जनता से लेकर जनता को लौटा देने' के उसूल पर ही निर्भर होकर ही होता है। इसका अर्थ है : जनता के बिखरे हुए विचारों को लेना चाहिए। इनकी समीक्षा करनी चाहिए। (अध्ययन के जरिए उन्हें समन्वित करके सुचारू विचारों में बदल देना चाहिए) उन्हें फिर जनता में ले जाना चाहिए। जनता में तब तक उन विचारों का प्रचार करते हुए समझा देना चाहिए जब तक कि वह उन्हें अपना मानकर स्वीकार कर, उनके लिए कमर कसकर व्यवहार में उतरने को तैयार नहीं होती। व्यवहार में यह परखना चाहिए कि ये विचार सही हैं या नहीं। बाद में फिर जनता से विचार लेकर उनकी समीक्षा करके, फिर जनता में ले जाकर यह कोशिश करनी चाहिए कि वह उन विचारों का तहेदिल से समर्थन करें। इस तरह बार-बार और लगातार यह प्रक्रिया दोहराने से हर बार विचार ज्यादा सही, ज्यादा शक्तिशाली और ज्यादा समृद्ध हो जाते हैं। यही मार्क्सवादी ज्ञान-सिद्धान्त है।

नेतृत्व को सही विचार बनाने के लिए जनता से विचार लेकर उनकी समीक्षा करनी चाहिए। बाद में उन्हें जनता में ले जाकर उनका तब तक विस्तृत प्रचार करना चाहिये जब तक कि वह उन्हें अपना समझकर स्वीकार नहीं करती। उन्हें व्यवहार में लागू करना चाहिए। यह नेतृत्व के लिए बुनियादी तरीका है। विचारों की समीक्षा करके उन्हें फिर से जनता में ले जाने में आम आव्हान को ठोस मार्गदर्शन से जोड़ने के तरीके का इस्तेमाल करना बहुत जरूरी है। यह बुनियादी तरीके का हिस्सा है। कई मामलों में दिए गए ठोस मार्गदर्शन से आम विचार (आम आव्हान) तैयार करने चाहिए। उनकी विभिन्न यूनिटों में परीक्षा ली जानी चाहिए। (व्यक्तिगत रूप से करने के अलावा उस तरह करने के लिए दूसरों को बताकर भी) नए विचारों को इकट्ठा करना चाहिए। जनता को मार्गदर्शन देने के लिए मार्गदर्शक नियम बनाने चाहिए। कॉमरेडों को इसे भूल-सुधार आन्दोलन के अलावा, हर दूसरे काम में भी लागू करना चाहिए। ऐसा करने से बड़ी कुशलता से लैस बेहतर नेतृत्व उभरेगा।

('नेतृत्व के तरीके सम्बन्धी कुछ समस्याएं' से माओ-त्से-तुड़ की रचनाएं, ग्रन्थ-3)

बीच में हस्तक्षेप करते हुए मैंने पूछा, ''यानी क्या आप यह कहते हैं कि आपकी नीतियों में किसी एक का भी विरोध या सवाल कभी नहीं हुआ ?''

''हमारी पांतों में कभी-कभार मतभेद व्यक्त किया जे सकते हैं, जो कि सहज है। लेकिन हमेशा उनको जनवादी तरीके से, चर्चाओं के जरिए और सिर उठाने वाली समस्याओं का विश्लेषण कर हल किया जा रहा है। तब भी यदि अल्पमत को यह विश्वास नहीं होता कि बहुमत का फैसला सही था, पार्टी की बैठकों में बहस-मुबहिसों के बाद वह बहुमत के मातहत काम करता है। हम लगातार इसका पता लगाते रहते हैं कि जन-समुदाय हमारी नीतियों में किन-किन नीतियों का अनुमोदन कर रहे हैं और किन-किन की आलोचना कर रहे हैं या ठुकरा दे रहे हैं - यह हमारे काम का निर्णायक पहलू है। जो नीतियां जनता का आदर हासिल कर चुकी नीतियों के रूप में साबित हो जाती हैं, वो ही हमारी नीतियां होंगी और जारी रहेंगी।''

''जब एक नई कार्रवाई शुरू की जाती है, उसे नहीं समझ सकने वाले लोग पार्टी के भीतर भी और बाहर भी हो सकते हैं। चूंकि हमारी तमाम पार्टी इकाइयां हमेशा यह देखती रहती हैं कि जनता की क्या प्रतिक्रिया है, इसलिए हम जनता की वास्तविक जरूरतों और रायों के मुताबिक लगातार हमारी कार्रवाइयों में फेरबदल करते रहते हैं। इसलिए एक कार्रवाई पर अमल के दौरान उसके बारे में पार्टी के भीतर और बाहर भी अत्यधिक लोगों का एकमत जरूर बनता है। जनता से दूर नहीं हो जाएं तथा उनकी जरूरतों ओर आरजुओं के साथ करीब से जुड़ जाना चाहिए। हमारे इस महत्वपूर्ण उसूल का ऊपर से नीचे तक की सभी पार्टी इकाइयों को पालन करना होगा।''

''हमारी नीतियों में चाहे किसी भी नीति के औचित्य को खुद जनता ही परखे। जनता परख भी रही है। हमारे फैसलों और नीतियों को खुद हम ही लगातार परखते रहते हैं। जब-जब गलतियां दिखाई पड़ती हैं, हम उन्हें सुधार लेते हैं। तमाम अनुकूल और प्रतिकूल अनुभवों से निष्कर्षों पर पहुंचते रहते हैं। इन निष्कर्षों का हर सम्भव विस्तृति से क्रियान्वयन करते हैं। इन तरीकों के जरिए कम्युनिस्ट पार्टी और जनता के बीच सम्बन्ध लगातार सुधरते जा रहे हैं।''

पार्टी सदस्यों को अपनी सभी कार्रवाइयों और फैसलों में 'जनमत' को ध्यान में रखने चाहिए - यह सीख पार्टी-सदस्यों को लगातार दे चुके माओ ने अपना इस बेहद पसंदीदा विषय का जिक्र आते ही बड़े उत्साह से बात की।

''यह बहुत ही बुनियादी अंश है। यदि एक राजनीतिक पार्टी की नेतृत्वकारी ताकतें सचमुच ही विशाल जन-समुदायों के हितों के लिए काम कर रही हों और अपने इस कार्य में उनकी ईमानदारी

हो, तो जनता के विचार सुनने के लिए उन्हें अनगिनत अवसर मिलेंगे ।''

''हम जनता के विचार जान लेते हैं – हमारे इलाकों में, गांवों में, शहरों में, जिलों में, प्रदेशों में सभी जगहों पर होने वाली सभाओं के जरिए, आबादी के सभी विभागों के स्त्री–पुरुषों और पार्टी–सदस्यों से की जाने वाली व्यक्तिगत बातचीतों के जरिए, विशेष बैठकों के जरिए, समाचार पत्रों के जरिए, जनता से हमें मिलने वाले तारों और खतों के जरिए – इन सभी के जरिए हम जनता के असली और वास्तविक विचारों को जान सकते हैं । हमेशा जान लेते ही रहेंगे ।''

''इसके अलावा, हम कार्याचरण के हरेक क्षेत्र में प्रसन्न कर देने वाले काम और अप्रसन्न कर देने वाले काम के ठोस उदाहरणों का पता लगाने का तरीका भी अपनाते हैं । हम इन ठोस उदाहरणों का गहराई से अध्ययन करते हैं । उनसे सीख लेते हैं । आवश्यक फेरबदल करने के लिए ठोस निष्कर्षों पर पहुंचने के लिए उस विषय पर हमारे अनुभवों की समीक्षा कर लेते हैं । हकीकत को परखकर अच्छे कार्य और बुरे कार्य, दोनों के उदाहरणों का अध्ययन करने के लिए आवश्यक समय कुछेक मौकों पर कुछ सप्ताह हो सकता है और कुछेक बार कुछ महीने या कुछ साल भी हो सकता है । पर इस तरीके के जरिए हम वास्तविक परिणामों से हमेशा करीबी सम्पर्क में रह सकते हैं । हम जान लेते हैं कि जनता क्या चाह रही है और उसकी जरूरतें क्या हैं । हम उन लोगों से सीख लेते हैं, जिन्होंने पार्टी के भीतर और बाहर सर्वोत्तम काम किया।''

''हमारे कुछ कैडर हमारी नीतियों को गहराई से नहीं समझते हुए उन पर अमल के दौरान कुछेक गलतियां करते हैं। इसलिए उन कामरेडों की आलोचना करते हुए उन्हें शिक्षित करना चाहिए । इसके लिए भी अच्छे कार्य के एक उदाहरण का अध्ययन करके विश्लेषण करना बहुत जरूरी है ।''

माओ ने मुझे लिबरेशन डैली अखबार की एक प्रति दिखाते हुए यूं कहा : ''लीजिए आज के अखबार का यही उदाहरण लीजिए । इस एक पूरे पन्ने में आने वाला एक बड़ा लेख है जिसमें 8वीं राह–सेना की एक कम्पनी ने किस तरह अपनी कमियों को दूर करके बेहतरीन यूनिटों में एक बनी है, उसका ब्यौरा है । हमारी सेनाओं की हरेक कम्पनी के कैडर और योद्धा यह लेख पढ़कर चर्चा करते हैं । एक कम्पनी के सकारात्मक अनुभव को एक नीति के तौर पर पांच हजार कम्पनियों को सिखाने का आसान तरीका है यह । इस अखबार में, बाकी दिनों में आपको एक सहकार संघ, एक स्कूल, एक अस्पताल या एक स्थानीय प्रशासनिक इकाई के बारे में इसी तरह का एक लेख दिखाई दे सकता है ।''

''हम दोबारा पार्टी कॉमरेडों और गैर–पार्टी जनता के बीच करीबी समझ और सहयोग का महत्वपूर्ण मुद्दा उठाएंगे । इस विषय में स्थिरता से जबर्दस्त सुधार हुआ है । लेकिन हमारे कॉमरेडों में कुछ अभी भी गलतियां कर रहे हैं ।''

''कुछ घटनाएं और गलत समझदारियां अभी भी हो रही हैं । आपको इधर–उधर ऐसे कॉमरेड दिखाई पड़ेंगे जो सभी मामलों को अपनी मुट्ठी में रखने की प्रवृत्ति से पीड़ित हों ।''

''इसलिए, यह बहुत महत्व रखता है कि हम हमारा जनवादी तरीका 'तीनों को तीन हिस्से' के तहत पार्टी के बाहर रही जनता को वास्तविक अधिकार दखल करवा रहे हैं । इस पर हम लगातार सभी का ध्यान दिलाते हैं । हम हमारे कॉमरेडों को ठोस तौर पर बता देते हैं कि हमारी नीति को वास्तविक क्रियान्वित करने के दौरान हमारे और पार्टी के बाहर जन–समुदायों के बीच वास्तविक सहयोग किस तरह जनता के अलावा, हमें भी उपयोगी हो सकता हे । नतीजतन, पार्टी और गैर–पार्टी जनता के बीच आपसी विश्वास वास्तविक कार्य, जिसे उन्हें एकजुटता से पूरा करना है, के दौरान बढ़ रहा है ।''

मैंने माओ से पूछा है कि क्या वे यह मान रहे हैं कि कम्युनिस्ट पार्टी ने अपनी नीतियों में कोई प्रमुख गलती की ।

''शुरू से ही यह बात साबित होती आ रही है कि सभी बुनियादी मुद्दों में हमारी नीतियां सही थीं । सबसे पहले, नव–जनवाद की हमारी तमाम नीतियों के मामले में यह सच है । देश की आजादी और जनवाद को लक्ष्य बनाकर चलने वाली क्रान्ति के लिए जन–समुदायों को अपने आप संगठित होने दिया जाए तथा निजी सम्पत्ति के आधार पर जनता के जीवन में सुधार लाया जाए ।''

''इन बुनियादी नीतियों का ठोस हालात में क्रियान्वयन करते समय कभी–कभी कुछ गलत विचलन, आंशिक वामपंथी विचलन और आंशिक दक्षिणपंथी विचलन पनपने की सम्भावना रहती है। वे समूची पार्टी के या पार्टी के भीतर के गुटों के विचलन नहीं हैं, बल्कि हमारी पांतों में मौजूद कुछ व्यक्तियों के विचलन हैं । इन सभी गलतियों से पूरी पार्टी ने सबक सीखा है ।''

''हाँ, कुछ मौकों पर हमारी पार्टी में कुछ ऐसे व्यक्ति रहे जिन्होंने माना कि चीन में उस समय साम्यवाद सम्भव था । लेकिन पार्टी का यह मत कभी नहीं रहा । चीन के ठोस हालात साम्यवाद को लम्बे अरसे तक असम्भव चीज बनाते जा रहे हैं । इसलिए, यह सम्भव नहीं है कि साम्यवादी सामाजिक व्यवस्था को तुरन्त व्यवहार में लागू करने की जिद करने वाला कोई गुट हमारी पार्टी में मौजूद हो ।''

''क्वोमिन्ताङ का यह आरोप बिलकुल बेबुनियाद है कि हमारी पार्टी में एक–दूसरे से मेल न खाने वाले भिन्न मतों वाले गुट मौजूद हैं । खुद कई गुटों में बँटी क्वोमिन्ताड वास्तव में एक जुट राजनीतिक पार्टी की कल्पनी सपने में भी नहीं कर सकती । शायद यही वजह है, चुंकिङ में कुछ लोग ऐसी अफवाहों पर विश्वास कर रहे हैं ।''

मैंने पूछा कि क्या आप कभी अल्पमत में रहे थे जिसकी वजह से आपके मतों पर अमल नहीं हुआ हो । उन्होंने यह जवाब दिया –

''हाँ, मैं अल्पमत में था । उस समय मुझे इन्तजार करने के अलावा कोई चारा ही नहीं था । लेकिन हाल के सालों में ऐसे मौके विरले ही आए ।''

('अमरीकी पत्रकार गुन्थर स्टेन को माओ द्वारा दिया गया

साक्षात्कार' से, माओ त्से-तुङ की संकलित रचनाएं, ग्रन्थ-6)

''जनता और आम पार्टी-सदस्यों के मन में भी सामंती तानाशाहीपूर्ण आदतें गहरी जड़ें जमा चुकी हैं । उन्हें एक साथ पोंछ डालना नामुमकिन है । कोई भी मुश्किल आ जाती है, तो जटिलतापूर्ण जनवादी तरीके को त्यागकर वे आसान तरीके ही चुन लेते हैं । जनवादी संगठनों में जनवादी केन्द्रीयता के उसूल पर सशक्त और विस्तृत तौर पर अमल करना तभी सम्भव है जब क्रान्तिकारी संघर्ष में जनवादी केन्द्रीयता की उपयोगिता साबित हो जाती, जनता यह समझ जाती कि अपनी शक्ति को संचित करने के लिए वही एक बेहतर रास्ता है और व्यवहार में यह साबित हो जाता कि उसके संघर्ष के लिए वह ज्यादा उपयोगी है ।''

('चिंकांङ के पहाड़ों में संघर्ष' से, माओ त्से-तुङ की संकलित रचनाएं, ग्रन्थ-1)

''हर कॉमरेड को स्पष्ट कर देना चाहिए कि जब तक हम जनता पर निर्भर रहते हैं, उनकी असीमित रचनात्मकता पर दृढ़ विश्वास रखते हैं, उन पर हमारा विश्वास बरकरार रहेगा, तब तक कोई भी दुश्मन हमें कुचल नहीं सकेगा, बल्कि हम ही किसी भी दुश्मन को कुचल दे सकेंगे, किसी भी तरह की मुश्किल का सामना कर सकेंगे .....''

जन-समुदायों में काम करने वाला प्रत्येक कम्युनिस्ट को उन पर हुक्म चलाने वाला होने के बजाए, उनका मित्र बनना चाहिए । धाक जमाने वाला राजनीतिज्ञ होने के बजाए, बिना किसी चिड़चिड़ापन के धैर्य से सिखाने वाला शिक्षक बनना चाहिए। किसी हाल में या किसी समय भी कम्युनिस्टों को अपने निजी हितों को प्रमुखता नहीं देनी चाहिए । हमेशा राष्ट्र के हितों और आम जनता के हितों के बाद ही उनकी गणना करना चाहिए । इसलिए, व्यक्तिगत लाभ-लोलुपता, निष्क्रियता, घूसखोरी, कीर्ति की लालसा आदि बेहद घृणास्पद हैं, जबकि स्वार्थहीनता, अपनी पूरी ताकत का इस्तेमाल करके कड़ी मेहनत से काम करना, जन-कर्तव्यों के निर्वाह के लिए तहेदिल से समर्पित हो जाना और बिना किसी दंभ के काम करना - ये सम्माननीय हैं । कम्युनिस्टों को चाहिए कि वे पार्टी के बाहर के प्रगतिशील व्यक्तियों से मिलजुलकर काम करना चाहिए । हर अवांछनीय चीज का अन्त करने के लिए समूची जनता को एकजुट करने के लिए प्रयास करना चाहिए । हमें इस बात पर ध्यान देना होगा कि पूरे राष्ट्र में कम्युनिस्ट महज एक छोटा हिस्सा ही हो जाएंगे, जबकि पार्टी के बाहर प्रगतिशील और कार्यदक्ष व्यक्ति बड़ी संख्या में मौजूद हैं, और उनके साथ मिलकर काम करना पड़ेगा । यह मानना पूरी तरह गलत है कि अकेले हम ही अच्छे लोग हैं और तमाम बाकी लोग बेकार हैं । जो राजनीतिक तौर पर पिछड़े हुए हैं, कम्युनिस्टों को चाहिए वे कि उनका नजरन्दाज कतई नहीं करें और उनसे नफरत कभी न करें । उनसे दोस्ती करके, उनसे मिलकर, अच्छी तरह समझा दिया जाए ताकि वे आगे बढ़ सकें । अपने काम में गलतियां करने वाला किसी भी व्यक्ति के बारे में - जब तक वह पूरी तरह अड़ियल न हो - कम्युनिस्टों का रवैया धैर्य से समझाने का होना चाहिए ताकि वह अपने को सुधारकर फिर से काम कर सके, पर उसे अलग-थलग कर दूर कर देने का नहीं होना चाहिए । व्यावहारिक तौर दूरगामी नजरिया अपनाने में कम्युनिस्टों को दूसरों के लिए मिसालें पेश करनी चाहिए । क्योंकि व्यावहारिक रुख रहने से ही सौंपे गए कर्तव्यों को पूरा कर सकते हैं । दूरगामी नजरिया होने से ही वे अपनी प्रगति के दौरान गुमराह बनने से बच जाएंगे । इसलिए अध्ययन में कम्युनिस्टों को आदर्शवान होना चाहिए । हर समय उन्हें जनता से सीख लेना चाहिए, साथों-साथ उन्हें उनसे सीखना भी चाहिए । जनता से, वास्तविक हालात से, दोस्तानापूर्वक पार्टियों और सेनाओं से सीखने से ही और उन्हें अच्छी तरह से समझकर ही हम अपने कार्य में व्यावहारिक और भविष्य के प्रति दूरगामी नजरिए से रह सकेंगे । दीर्घकालीन युद्ध में प्रतिकूल हालात में दोस्ताना पार्टियों, सेनाओं और जन-समुदायों की प्रगतिशील ताकतों से मिलकर कम्युनिस्ट जब आदर्शवान अग्रणी भूमिका निभाएंगे, तभी मुश्किलों को पार कर, दुश्मन को परास्त कर राष्ट्र की समूची चेतनापूर्ण ताकत को जुटा सकें ताकि नव-चीन का निर्माण किया जा सके ।

('राष्ट्रीय युद्ध में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की भूमिका' से, माओ त्से तुङ की संकलित रचनाएं, ग्रन्थ-2) ❖

''दीर्घ यात्रा (लांग मार्च) का जिक्र करते हुए, कोई भी यह सवाल पूछ सकता है कि उसका महत्व क्या है ? हम बताएंगे कि वह इतिहास में ही अनोखी थी । वह एक योजना थी, एक प्रचार-शक्ति थी, बीज बोने वाली बड़ी मशीन थी ..... बारह महीनों तक आए दिन आसमान में दर्जनों हवाई जहाजों ने बमों से हमारा पीछा किया । जमीन पर कुछ लाखों सेना ने हमारा पीछा किया, घेरा डाला, रुकावटें खड़ी कीं, रास्ते को अवरुद्ध किया और यात्रा में अकथनीय मुश्किलों एवं खतरों का सामना करना पड़ा । इसके बावजूद हमने 11 राज्यों से पैदल चलकर लगभग 12,500 किलोमीटर से ज्यादा दूरी की यात्रा पूरी की । हम पूछ रहे हैं कि क्या इतिहास में कहीं ऐसी दीर्घ यात्रा रही जिसकी तुलना इससे की जा सके ? नहीं, कभी नहीं रही । दीर्घ यात्रा एक योजना थी जिसने दुनिया को साफ तौर पर ऐलान कर दिया कि साम्राज्यवादी और उनके भाड़े के टट्टू चियाङ काई-शेक जैसे लोग कायर हैं, जबकि लाल सेना के सैनिक बहादुर हैं । उसने स्पष्ट किया कि हमें बाधित करने में, रास्ते में अटकाकर वार करने में, पीछे से भगाने में और घेरा डालकर विनाश करने में वे कितनी बुरी तरह नाकामयाब हो गए । दीर्घ यात्रा एक बड़ी प्रचार-शक्ति थी । उसने 11 राज्यों में 20 करोड़ जनता को बता दिया कि लाल सेना की राह ही उसकी मुक्ति की एक मात्र राह है । लाल सेना का रूप लेने वाली इस महत्वपूर्ण सच्चाई को इतना विशालतम जन-समुदाय का इतनी जल्दी से समझ लेना, दीर्घ यात्रा के बिना भला कैसे सम्भव था ? दीर्घ यात्रा बीज बोने वाली एक बड़ी मशीन थी । उसने 11 राज्यों में कई बीज बोए जो कि अंकुरित होकर, पल्लवित होकर, खिलकर और फलकर आगे-आगे जबर्दस्त फसल देंगे । एक शब्द में दीर्घ यात्रा की समाप्ति हमारी जीत और दुश्मन की पराजय के रूप में हुई ।''

- माओ

छापामार युद्ध

– माओ त्से तुङ (1937)

(चीनी क्रान्ति के दौरान, उस दीर्घकालीन युद्ध के अनुभवों के आधार पर महान अध्यापक माओ ने विश्व के सर्वहारा के लिए उसका अपना व्यापक सैन्य-विज्ञान बनाया । छापामार युद्ध की रणनीतिक स्तर पर व्याख्या की। जन-दुश्मनों के मुकाबले छोटी और कमजोर जन-शक्ति शून्य की स्थिति से जन सेना का गठन करके, आधार-क्षेत्रों की स्थापना करते हुए, उस दौरान अपनी ताकत को बढाते हुए, आगे बढते हुए दुश्मन को पराजित कर सकती है कहते हुए महान अध्यापक माओ ने हमें सिखा दिया कि उसके लिए छापामार युद्ध ही सही रास्ता है । छापामार युद्ध पर उनकी रचनाओं में से कुछ अंश यहां पेश किया जा रहा है ।)

1. छापामार युद्ध क्या है?

क्रान्तिकारी स्वभाव वाले युद्ध में छापामार सैन्य-कार्रवाईयां एक जरुरी हिस्से के तौर पर होंगी । एक विशालतम देश में जीने वाली जनता की मुक्ति के लिए जारी युद्ध में यह विशेष रुप से लागू होने वाली सचाई है । चीन भी उसी तरह का देश है । तकनीकी तौर पर बेहद पिछड़ा; संचार, सूचना, परिवहन आदि सुविधाओं के मामले में खस्ता हाल देश है । वह शक्तिशाली एवं विजयोन्मादी जापनी साम्राज्यवाद से भिड़ रहा है । बड़े पैमाने पर चलने वाले छापामार युद्ध का विकसित होना न सिर्फ जरुरी विषय है, बल्कि एक स्वाभाविक विषय है । युद्ध के इस तरीके को बेजोड़ ढ़ंग से विकसित करना चाहिए .....

इन छापामार कार्रवाइयों को युद्ध का एक स्वतन्त्र रुप नहीं समझना चाहिए । वे पूरे युद्ध का सिर्फ एक चरण है; क्रातिंकारी संघर्ष का सिर्फ एक पहलू है और जब उत्पीड़कों की बरदाश्त हद कर जाती है, उत्पीड़ितों और उत्पीड़कों के बीच होने वाले संघर्ष के अनिवार्य नतीजे है । जहाँ तक हमारा ताल्लुक है, जापानी साम्राज्यवादीयों के कुकर्मों की बरदाश्त करना जब बिलकुल ही संभव नही था, ये छापामार कार्रवाइयां शुरु हो गईं । लेनिन ने अपना लेख जनता क्रन्ति में कहा था : '' जनता की बगावत और जनता की क्रान्ति स्वाभविक ही नहीं, अनिवार्य भी हैं ।'' हम छापामार कार्रवाइयों को हमारे पूरे युद्ध या हमारे जनयुद्ध का एक पहलू ही मानते हैं । स्वतंत्र रुप से चल सकने के गुण से वे वंचित हैं । चूंकि वे अपने आप ही हमारे संघर्ष का समाधान नहीं कर सकेंगी, इसलिए हम ऐसा मानते हैं ।

छापामार युद्ध के उसके अपने विशिष्ट गुण और लक्ष्य होते हैं। वह ऐसा हथियार है जिसे अस्त्र-शस्त्रों और सैन्य सामग्री की दृष्टि से दुश्मन के मुकाबले एक कमजोर देश अपने से ताकतवर और अपने पर दुराक्रमण करने वाले देश के खिलाफ इस्तेमाल कर सकता है । एक दुराक्रमणकारी देश जब एक कमजोर देश के बीचों-बीच तक घुसकर पाशविक दमन चलाकर भू-भाग पर कब्जा कर सकता है , तब इस बात में कोई शक नहीं होना चाहिए कि भौगोलिक स्थितियां, माहौल और पूरा समाज ही उसकी प्रगति में बाधा डालता है । और जो उसका विरोध करते हैं वे इनसे फायदा उठा सकते हैं । छापामार युद्ध में हम दुश्मन का प्रतिरोध करने के लिए इन अनुकूल पहलुओं से फायदा उठाते हैं ।

छापामार युद्ध के कुछ गुण होते हैं जोकि उसके विकासक्रम में भी और उसका क्रियन्वयन करने के तरीके में भी साफ झलकते हैं ..... चीनी जनता की सम्पूर्ण मुक्ति का हमारा राजनीतिक मकसद हासिल करने के लिए हम इस नीति का अनुसरण करते हैं । इस नीति को अपनाने में कुछ मूलभूत कदम उठाना लाज़मी हो जाता है । उनमें से कुछ :

1. जनता को जागृत करके संगठित करना ।
2. देश के भीतर राजनीतिक एकता हासिल करना ।
3. आधार-क्षेत्रों का गठन करना
4. बलों को सामग्री से लैस करना
5. राष्ट्र की ताकत को दोबारा बढ़ाने का प्रयास करना
6. दुश्मन की राष्ट्र-ताकत पर चोटकरना
7. खोए भू-भागों को फिर से जीत लेना ।

छापामार युद्ध का जनता से क्या सम्बन्ध हैं ? राजनीतिक लक्ष्य के बिना छापामार युद्ध जरुर विफल हो जाएगा । इसी तरह जनता की आकांक्षाओं से उसके राजनीतिक मकसद मेल नहीं खाते हैं । और इससे जनता के हमदर्द और सहयोग प्राप्त नहीं कर सकेगा, तो वह विफ ल होकर रहेगा । इसीलिए सारांश मे छापामार युद्ध क्रान्तिकारी स्वभाव का होता है । दूसरी ओर प्रतिक्रियावादी प्रकृति वाले युद्ध में, छापामार लड़ाई की कार्रवाइयों की कोई जगह ही नहीं है । ऐसा इसलिए कि मूल रूप से जनता से ही छापामार युद्ध का जन्म होता है, और वह उसका समर्थन हासिल करना है। जन-समुदायों की हमदर्दी व सहयोग के बिना छापामार युद्ध का फल-बढ़ सकना नामुमकिन है । छापामार कार्रवाइयों की समझ के अभाव में, जनता के छापामार युद्ध के दिखाई पड़ने वाले लक्षणों को नहीं समझ सकने वाले चंद लोग यूं कहते हैं : ''सिर्फ नियमित फौजें ही छापामार कार्रवाइयां कर सकती हैं ।'' कुछ लोगों को इस बात पर भरोसा नहीं है कि छापामार कार्रवाइयां अंततया जीत हासिल कर सकती हैं । वे यह गलत राय पेश करते हैं, ''छापामार युद्ध का कोई महत्व नहीं है, वह बेहतर कुशलता से की जाने वाली कार्रवाई है जिसमें जन-समुदायों की कोई जगह ही नहीं है ।'' (जन-चि-शान) कुछ ऐसे लोग भी हैं जो यह बकवास करते हुए प्रतिरोध पर पानी फेरते हैं कि प्रतिरोध युद्ध के बारे में जनता बिलकुल नासमझ हैं, ए चिङ इस श्रेणी में आता है । यह प्रतिरोध युद्ध जिस पल में जन-समुदायों से अलग-थलग पड़ जाता है, ठीक उसी पल से जापानियों के खिलाफ अन्तिम जीत हासिल

करने की आकांक्षा से दूर हो जाता है ।

छापामार युद्ध का ढांचा क्या होता है ? जन-समुदायों से जन्म लेने वाले सभी छापामार दस्तों को, उनके गठन के समय ढांचा का अभाव रहता है । फिर भी उन सभी को साझे तौर पर संगठित करने का एक मूलभूत आम गुण है । हरेक छापामार यूनिट का उसका अपना राजनीतिक एवं सैनिक नेतृत्व का होना जरूरी है । चाहे वह यूनिट किस स्त्रोत से बने और कितनी संख्या में क्यों न हो, सब यूनिटों पर यह सच्चाई लागू होती है । छापामार यूनिटें जन-समुदायों से स्थानीय स्तर पर गठित की जा सकती है, नियमित सेनाओं और जन-समूहों के सम्मेलन से गठित की जा सकती हैं, या पूरी तरह नियमित फौजी यूनिटों से ही गठित की जा सकती हैं । इस मामले में उन यूनिटों की संख्यागत ताकत कोई असर नहीं डालेगी । ऐसी यूनिटें एक दस्ता जिसमें चंद लोग ही होते हैं, या एक बटालियन (वाहिनी) जिसमें सैकड़ों लोग होते हैं,या फिर रेजीमेंट जिसमें हजारों लोग होते हैं, हो सकती हैं ।

इन तमाम यूनिटों को ऐसे मजबूत नेता चाहिए, जो अपनी नीतियों पर मजबूती से डटे रहकर निश्चयात्मकता, समर्पण की भावना और ईमानदारी से काम करते । वे क्रान्तिकारी निपुणता के धनी और आत्मबल से भरे होना चाहिए । कड़ा अनुशासन कायम करने की क्षमता, विरोधी प्रचार का मुकाबला कर सकने वाली दक्षता इनको होनी चाहिए । संक्षेप में कहा जाए, तो इन नेताओं को जनता के लिये आदर्शवान होना चाहिये । युद्ध की प्रगति के साथों साथ, ऐसे नेता युद्ध में व्याप्त अनुशासनहीनता से क्रमबद्ध तरीके से उबर सकेंगे । वे अपने बलों को और भी ज्यादा मजबूत बनाते हुये, उनकी जुझारू क्षमता को और बढ़ाते हुये अनुशासन को कायम कर सकेंगे । इस तरह अंतिम जीत हासिल की जायेगी।

असंगठित छापामार युद्ध से जीत की उम्मीद नहीं की जा सकती.....

बुनियादी छापामार रणनीति क्या है? छापामार रणनीति को बुनियादी तौर पर सावधानी, गतिशीलता आदि पर जरूर निर्भर करना चाहिये । दुश्मन की ताकत, भौगोलिक स्थिति (टेरेन) उपलब्ध सूचना-संचार सुविधायें, मजबूत और कमजोर पहलू, मौसम, जनता की हालत आदि के मुताबिक उसे संशोधित कर लेना चाहिये।

छापामार युद्ध में, पूर्व से आने का दिखावा करके पश्चिम से हमला करना; मजबूत केन्द्रों को छोड़कर कमजोर जगहों (खोखली-सी) पर हमला करना; हमला करो, पीछे हटो, बिजली की रफ्तार से वार करो और बिजली की तेजी से मिलने वाले नतीजों के लिये कोशिश करो के दांव-पेंच अपनाना होगा । छापामारों को जब अपने मुकाबले मजबूत दुश्मन से भिड़ना पड़ता है, तो दुश्मन आगे बढ़ता है तो पीछे हट जाते हैं । वह रुकता है, तो उसे हैरान-परेशान करते हैं । वह थक जाता है, तो वार करते हैं, वह पीछे हटता है, तो उसको खदेड़ते हैं । छापामार रणनीति में दुश्मन के पृष्ठभाग, बाजू आदि कमजोर स्थान ही उसके मर्म स्थल हैं । वहीं पर उसे हैरान-परेशान कर देना चाहिये । धावा बोलना चाहिये । तितर-बितर कर देना चाहिये और थका-थका कर सफाया कर देना चाहिये । सेना की कार्रवाइयों से तालमेल के साथ अपनी कार्रवाइयों को जारी रखते हुये, इस तरह ही छापामार स्वतन्त्र छापामार कार्रवाई की अपनी जिम्मेदारी को अंजाम दे सकते हैं । लेकिन कमान के मामले में गलतियां हो जायें, तो जीत हासिल नहीं की जायेगी, चाहे कितनी मुकम्मल तैयारियां क्यों न की गई हों । हमारे द्वारा सुझाये गये नियमों पर निर्भर रहते हुये, एक व्यापक दायरे वाले इलाके में, जहां संचार सुविधायें पर्याप्त हों, चलाया जाने वाला छापामार युद्ध जापानियों की अंतिम पराजय के लिये और साथों-साथ चीनी जनता की मुक्ति के लिये महत्वपूर्ण योगदान करेगा ।

परम्परागत सैन्य कार्रवाइयां, यानी नियमित युद्ध और चलायमान युद्ध के आम लक्षण छापामार युद्ध लक्षणों से बुनियादी तौर पर ही भिन्न हैं । निर्माण, असलह, साजो-समान, सप्लाई, कार्यनीति, कमान आदि में तुरन्त दिखाई देने वाली अन्य भिन्नतायें हैं । 'युद्ध मोर्चा', 'पृष्ठभाग' जैसे शब्दों के बारे में समझ में भी और सैन्य जिम्मेदारी में भी साफ दिखाई देने वाली भिन्नतायें हैं ।

छापामार युद्ध में निरंतर कार्रवाइयां और गतिशीलता उसकी बुनियादी कार्यनीति होगी । इसलिये उसकी रणनीति भी स्पष्ट रूप से ही, परंपरागत सैन्य कार्रवाइयों में इस्तेमाल की जाने वाली रणनीति से अलग होगी । छापामार युद्ध में निर्णायक लड़ाई की कोई जगह ही नहीं होगी ।

एक स्थान पर रहकर निष्क्रिय आत्मरक्षा करने का परम्परागत युद्ध का तरीका छापामार युद्ध में नहीं होगा । छापामार युद्ध में चलायमान स्थिति से मोर्चाबद्ध आत्मरक्षात्मक स्थिति में परिवर्तित होना सम्भव ही नहीं है । चलायमान युद्ध संबंधी टोह लेने के साधारण लक्षण, आंशिक फैलाव, साधारण फैलाव, हमले का विकास, आदि छापामार युद्ध में आमतौर पर नहीं होंगे ।

नेतृत्व कमान के मामले में भी भिन्नतायें हैं । छापामार युद्ध में स्वतन्त्र रुप से काम करने वाली छोटी-मोटी यूनिटें ही अहम भूमिका निभाती हैं । उनका कार्रवाइयों में जरूरत से ज्यादा दखल से बिलकुल परहेज करना चाहिये । परंपरागत युद्ध में, विशेषकर तेजी से बदलने वाले हालात में, निचली यूनिटें कुछ हद तक पहलकदमी कर सकती हैं । लेकिन केन्द्रीकृत कमान ही परम्परागत युद्ध का उसूल है । चूंकि सभी यूनिटों और सभी जिलों (सैन्य) के सहायक हथियारबन्द बलों को सर्वोच्च स्तर पर आपसी तालमेल के साथ काम करना जरूरी होता है, इसीलिये केन्द्रीकृत कमान का होना बहुत जरूरी है । छापामार युद्ध में न सिर्फ इसकी अपेक्षा नहीं की जाती, बल्कि वह संभव ही नहीं है । सिर्फ सटकर रहने वाली छापामार यूनिटें कुछ हद तक अपनी गतिविधियों में तालमेल बिठा सकती हैं । रणनीतिक तौर पर उनकी गतिविधियों का नियमित बलों की गतिविधियों से तालमेल कुछ हद तक बिठाकर चलाया या सकता है, जबकि कार्यनीतिक तौर पर उन्हें अपने आसपास में रहने वाली नियमित सेना की इकाइयों से जरूर सहयोग करना होगा । पर छापामार गतिविधियों के दायरे पर कोई सीमा नहीं होती। कई यूनिटों के बीच आपसी सहयोग उसका प्राथमिक गुण नहीं है ।

'रणक्षेत्र', 'पृष्ठभाग' जैसे शब्दों की जब हम चर्चा करते हैं, हमें यह विषय जरूर ध्यान में रखना होगा कि हालांकि यह बात

सच है कि छापामारों के आधार क्षेत्र होते हैं, फिर भी दुश्मन का पृष्ठभाग ही उनकी गतिविधियों की प्राथमिक रंगभूमि है । छापामारों का कोई पृष्ठभाग ही नहीं होता । परम्परागत सेना के पृष्ठभागीय निर्माण (इन्सटलेशन्स) होते हैं (लाल सेना की दस हजार मीलों की दीर्घ यात्रा जैसे मौके, या शानसि राज्य में काम करने वाली कुछ यूनिटों के मामले इसका अपवाद हैं) । इसलिये वह छापामारों की तरह काम नहीं कर सकती ।

और जहां तक सैन्य जिम्मेदारियों का सवाल है, छापामारों की ये जिम्मेदारियां होती हैं : दुश्मन की छोटी-मोटी यूनिटों का सफाया करना, बड़े बलों को हैरान-परेशान करके कमजोर बनाना, दुश्मन के सूचना-प्रसार मार्गों पर धावा बोलना, दुश्मन के पृष्ठभाग में स्वतन्त्र लड़ाई की गतिविधियों की मदद कर सकने की क्षमता प्राप्त आधार क्षेत्रों की स्थापना करना, दुश्मन को अपनी ताकत को बिखेरने पर मजबूर करना तथा दूरस्थ युद्ध क्षेत्रों में मौजूद नियमित सेनाओं की गतिविधियों से इन तमाम कार्रवाइयों का तालमेल बिठाना ।

.....

उसी तरह, जनता से बनने वाली छापामार यूनिटें सिलसिलेवार नियमित यूनिटों में तब्दील हो सकती हैं। जब नियमित यूनिटों की तरह काम करती हैं, तब परंपरागत चलायमान युद्ध के दांवपेंच अपना सकती हैं । जब छापामार यूनिटों के रूप में वे काम करती हैं, इनकी तुलना एक विशालकाय खूंखार जानवर को आगे भी-पीछे भी काट-काट कर थका देने वाली ततैयों के झुंड से की जा सकती है । वे कर्कश, कठोर व असह्य शैतानों के झुंडों की तरह बन जाते हैं । वे जब ऊंचे प्रमाणों तक बढ़ जाते हैं, तब वे समझ जाते हैं कि जो उनका शिकार होता है वह न सिर्फ थक जाता है, बल्कि वह आखरी सांसें गिन रहा होता है । ठीक इसी वजह से हमारी छापामार गतिविधियां साम्राज्यवादी जापान के दिलों में लगातार हड़कंप मचाने वाले केन्द्र बन गईं ।

.....

उन वर्षों के अनुभव से कई अनमोल सबक सीख सकते हैं। उनमें प्रमुख वह सच्चाई है कि छापामार की जीत मोटे तौर पर उन शक्तिशाली राजनीतिक नेताओं पर निर्भर करती है, जो अंदरूनी एकता लाने के लिये बिना रुके काम करते हों । ऐसे नेताओं को जनता से मिलजुल कर काम करना होगा । उन्हें इस बात पर सही रवैया होना चाहिये कि जनता और दुश्मन के प्रति किस तरह का रवैया अपनाया जाये ।

.....

ये सब हथियारबन्द छापामार यूनिटों के संगठन सम्बन्धी सवाल हैं । ये ऐसे सवाल हैं, जिन्हें समझना और सही फैसले लेना उन लोगों के लिये एक टेढ़ी खीर है, जिन्हें कि छापामार गतिविधियों का कोई अनुभव नहीं है । दरअसल उन्हें यह भी नहीं मालूम कि कैसे शुरु किया जाये ।

मूलतया छापामार यूनिटों का घटन कैसा होता है?

नीचे के इन तरीकों में से किसी एक से वह यूनिट उत्पन्न हो सकती है :

अ) जन-समुदायों से ।

आ) अस्थाई तौर पर इस काम के लिए विशेष रुप से भेजी नई नियमित सैन्य यूनिटों से ।

इ) स्थाई तौर पर इस काम के लिए विशेष रुप से भेजी गई नियमित सैन्य यूनिटों से ।

ई) नियमित सैन्य यूनिट और जनता से भर्ती की गई यूनिट के मिश्रण से ।

उ) स्थानीय मिलीशिया से

ऊ) दुश्मन की कतारों को छोड आने वालों से ।

ऋ) भूतपूर्व डकैतों और डकैती गिरोहों से

वर्तमान लड़ाइयों में बेशक इन सभी स्रोतों का इस्तेमाल करेंगे । ऊपर के पहले तरीके में एक छापामार यूनिट जनता से गठित किया जाता है । और यही बुनियादी तरीका है । जनता का उत्पीड़न करने और कत्लेआम करने के लिए जैसे ही दुश्मन सेना पहुंच जाती है, जनता के नेता प्रतिरोध का आव्हान करते हैं । वे सबसे ज्यादा बहादुर तत्वों को इकट्ठा करते हैं, उन्हें पुरानी रायफलों या जो भी आग्नेयास्त्र उपलब्ध हो उनसे हथियारबन्द बनाते हैं, और इस तरह एक छापामार यूनिट की शुरुआत हो जाती है ।

कुछ लोग ऐसे भी हैं जो कहते हैं : ''मैं एक किसान हूँ, या, मैं एक छात्र हूं; मैं साहित्य चर्चा ही कर सकता हूँ फौजी कलाओं पर नहीं।'' यह गलत है । किसान और फौजी के बीच कोई ज्यादा बड़ा फर्क नहीं है । आपको हिम्मत होनी चाहिए । आप आसानी से आपके खेत छोड़ते हैं और फौजी बन जाते हैं । आप किसान होने से कोई बड़ा फर्क पड़ने वाला नहीं है । और यदि आप शिक्षित हों तो वह बहुत बढ़िया होगा । जब आप आपके हाथों में बन्दूक लेते हैं, आप फौजी बन जाते हैं । जब आप संगठित बन जाते हैं, आप सैन्य यूनिटों में बदल जाते हैं।

छापामार संघर्ष की कार्रवाइयां युद्ध का विश्वविद्यालय हैं । आप कई बार बहादुरी और आक्रामकता से लड़ने के बाद, आप टुकड़ियों के नेता बन सकते हैं और कई ऐसे जाने-माने नियमित सैनिक होंगे, जो आपके जोड़ नहीं बनेंगे । इसमें कोई शक नहीं, छापामार युद्ध जनता से ही उत्पन्न होता है, जो अपने से छापामार यूनिटों का गठन करती है ।

छापामार निर्माणों को संगठित करने का तरीका

छापामार गतिविधियों में भाग लेने का फैसला करने वालों में कई लोग संगठन के तरीके नहीं जानते । ऐसे लोगों को, साथों-साथ उन छात्रों को जिन्हें सैन्य मामलों में कोई ज्ञान नहीं है, संगठन का मामला एक ऐसा सवाल है, जिसका समाधान करना जरूरी है । सैन्य ज्ञान प्राप्त करने वालों के अन्दर भी ऐसे कुछ लोग हैं, जो छापामार निर्माणों के बारे में कुछ नहीं जानते, क्योंकि उनमें उस विशेष प्रकार के अनुभव की कमी है ।

16 से 45 साल की उम्र के सभी स्त्री-पुरुषों को जापान विरोधी आत्मरक्षा यूनिटों में संगठित करना चाहिये । स्वैच्छिक

सेना इसके लिये आधार होना चाहिये । पहले चरण में उन्हें हथियार इकट्ठा करना होगा और बाद में उन्हें सैनिक और राजनीतिक प्रशिक्षण दिया जाना चाहिये । उनकी जिम्मेदारियां ये हैं : स्थानीय संत्री का काम, दुश्मन की खबर इकट्ठी करना, देशद्रोहियों को गिरफ्तार करना, शत्रु प्रचार को फैलने से रोकना और जब दुश्मन छापामारों को कुचलने की मुहिम छेड़ता है, हर उपलब्ध हथियार से लैस इन छापामार यूनिटों को कुछ इलाकों का जिम्मा दिया जाता है, ताकि वे दुश्मन को धोखा दे सकें, परेशान कर सकें और बाधित कर सकें ।

इस तरह, ये आत्मरक्षा यूनिटें लड़ाकू छापामारों की सहायता करती हैं । इनके अन्य काम भी हैं । वे घायलों को ढोने के लिये डोला-वाहक उपलब्ध कराती हैं । सेना को आहार पहुंचाने वाले वाहक उपलब्ध कराती हैं । सेना को चाय, चावल आदि पहुंचाने वाले राहत दस्ते उपलब्ध कराती हैं । यदि एक इलाका इस तरह की एक आत्मरक्षा यूनिट गठित कर लेता है, तो देशद्रोहियों को छिपने के लिये कोई जगह ही नहीं होगी । चोर-डाकू जनता की शांति को भंग नहीं कर सकते । इस तरह जनता लगातार छापामारों की सहायता करती रहेगी और नियमित सेनाओं को मानवशक्ति की आपूर्ति करेगी । ''आत्मरक्षा यूनिटों का संगठन सभी को सेना में भर्ती करने के तरीके के विकासक्रम में एक अस्थाई दौर है । ऐसी यूनिटें परंपरागत बलों के लिये मानवशक्ति के खजाने हैं ।''

.....

उन जगहों पर जहां दुश्मन अपनी गतिविधियां जारी रखा हुआ हो, इन आत्मरक्षा यूनिटों को अपनी-अपनी यूनिटों से तीन से लेकर दस सदस्यों वाली छापामार टोलियों का गठन करना चाहिये । पिस्तौल और रिवॉल्वर इन टोलियों के हथियार होंगे। इस टोली को अपनी जगह को छोड़कर जाने की कोई जरूरत नहीं होगी ।

चूंकि ये आत्मरक्षा यूनिटें जनता को सैनिक और राजनीतिक विज्ञान सिखाने में, पृष्ठभागीय इलाके में अमन और चैन को कायम करने में तथा नियमित बलों में खाली स्थानों की भर्ती करने में भी उपयोगी होती हैं, इसलिये इस लेख में इनके निर्माण के बारे में बताया गया । इन टोलियों को न सिर्फ सक्रिय युद्ध क्षेत्रों में, बल्कि चीन के हर राज्य में संगठित करना चाहिये । 'जनता को स्वैच्छिक सहयोग देने पर प्रेरित करना चाहिये । हमें जनता पर जबर्दस्ती नहीं करनी चाहिये । ऐसा करते हैं, तो वह बेकार होगा ।' यह बहुत ही महत्वपूर्ण बात है ।

छापामार सेना के तत्व

इस शीर्षक में प्रयुक्त 'तत्व' का शब्द छापामार सेना के सैनिकों और अफसरों दोनों को सूचित करता है । चूंकि हरेक छापामार टोली दीर्घकालिक युद्ध में लड़ती है, इसलिये उसके अफसर बहादुर और सकारात्मक होने चाहिये, जिनकी पूरी निष्ठा जनता की मुक्ति की खातिर समर्पित हो चुकी हो । एक अफसर के लक्षण ये होने चाहिये : कितनी भी मुश्किलों के बावजूद अपने सैनिकों के सामने एक मिसाल बनकर पेश आने और आदर्श स्थापित करने लायक उसकी सहनशीलता हो; वह जनता से आसानी से घुलमिल सकने वाला हो, जापानियों का प्रतिरोध करने की नीति को मजबूत बनाना ही उसकी और उसके सैनिकों की साझी चेतना होनी चाहिये। यदि वह जीतें हासिल करना चाहता है, तो उसे कार्यनीति का अध्ययन करना होगा । इस तरह की क्षमता वाले अफसरों से लैस एक छापामार टोली को परास्त नहीं किया जा सकता । पर मेरा यह मतलब नहीं है कि हरेक छापामार टोली के उसके उदय से ही ऐसे अफसर होंगे । अफसर ऐसे लोग होने चाहिये, जो स्वाभाविक रूप से अच्छे गुणों से सम्पन्न हों, जो कि लड़ाई के दौरान और भी विकसित किया जा सकते हों । जनता की मुक्ति के विचार के प्रति सम्पूर्ण निष्ठा सबसे महत्वपूर्ण स्वाभाविक गुण है । यदि यह गुण मौजूद होगा, तो बाकी विकसित हो जायेंगे । यदि यह मौजूद नहीं हो, तो कुछ भी नहीं किया जाता । जब किसी टोली से अफसरों का चयन पहले किया जाता है, इसी गुण पर सबसे ज्यादा ध्यान देना होगा । एक टोली के अफसर उस इलाके के निवासी हों, जहां वह टोली संगठित की गई हो । इससे स्थानीय नागरिकों से इनके रिश्ते आसान हो जायेंगे । इसके अलावा, इस तरह चुने गये अफसर स्थानीय हालात से ज्यादा रूबरू होंगे भी । यदि किसी इलाके में आवश्यक गुणों से संपन्न अफसर पर्याप्त नहीं होंगे तो जनता को शिक्षित और प्रशिक्षित करने के प्रयास किये जाने चाहिये, ताकि इन गुणों को विकसित किया जा सके और सम्भावित अफसरों की तादाद को बढ़ाया जा सके । स्थानीय अफसरों और दूसरों इलाकों से आये अपसरों के बीच मतभेद की कोई जगह ही नहीं होनी चाहिये ।

छापामार टोली को इसी उसूल पर काम करना चाहिये कि जो लोग स्वैच्छिक रूप से सामने आते हैं, उन्हीं को भर्ती किया जायेगा । जनता को बलपूर्वक काम में उतारना गलत है । एक व्यक्ति जब तक लड़ना चाहता रहेगा, उसकी सामाजिक स्थिति या स्थान से कोई लेना-देना नहीं है, पर जो लोग बहादुर और इरादे के पक्के हों, वे ही दीर्घकालिक युद्ध में छापामार लड़ाई के दौरान उत्पन्न मुश्किलों का सामना कर सकते हैं ।

आदतन नियमों को तोड़ने वाले सैनिक को सेना से बरखास्त कर देना चाहिये । आवारागर्दों और बुरे चरित्र के लोगों को सेवा में नहीं ले लेना चाहिये । अफीम के सेवन पर प्रतिबन्ध लगाना चाहिये और जो सैनिक उस लत से अपने को दूर नहीं कर सकता, उसे बरखास्त करना चाहिये । छापामार युद्ध में जीत तभी सम्भव है, जब उसके सदस्यगण साफ और निर्मल हों ।

यह सच है कि युद्ध के दौरान दुश्मन ऐसे लोगों को, जिनमें देशभक्ति और ईमानदारी की कमी हो, छापामारों में भर्ती करा सकता है, ताकि उनके साथ गद्दारी कर सके । इसलिये अफसरों को चाहिये कि वे अपने सैनिकों को लगातार शिक्षित करें और उनमें देशभक्ति भर दें । यह देशद्रोहियों के मंसूबों को नाकाम कर देता है । हमारी कतारों में मौजूद देशद्रोहियों का पता लगाकर बहिष्कार करना चाहिये । ऐसे सभी अवसरों पर अफसरों को चाहिये कि वे सैनिकों को एकत्र करके तथ्यों से अवगत कराएं । इस तरह देशद्रोहियों के प्रति उनकी नफरत और घृणा को बढ़ाना चाहिये, ज्यादा भड़काना चाहिये । यह तरीका दूसरे सैनिकों के लिये एक चेतावनी के तौर पर भी काम करेगा। यदि कोई अफसर देशद्रोही निकलेगा, तो उसे सजा देने में समझदारी से काम लेना चाहिये । बहरहाल, सेना से देशद्रोहियों को निकाल बाहर करने का काम

जनता से उन्हें निकाल बाहर करने के साथ शुरू हो जाता है ।

कठपुतली सरकारों के मातहत काम कर चुके चीनी सैनिकों और परिवर्तित हुये डकैतों का स्वागत किया जाना चाहिये, भले ही वे अलग-अलग व्यक्ति हों या जत्थों में हों । उनके साथ अच्छा बरताव करके उन्हें दोबारा बसने का बन्दोबस्त करना चाहिये, लेकिन उनके परिवर्तन के दौरान यह तय करने में सावधानी बरतनी चाहिये कि जापानियों को खदेड़ने का विचार किसमें है और अन्य हितों की खातिर कौन आया है ।

छापामार युद्ध की राजनीतिक समस्यायें

पहले अध्याय में मैंने लिखा था कि छापामार बलों को संघर्ष के राजनीतिक लक्ष्य पर और उसे हासिल करने के लिये आवश्यक राजनीतिक संगठन पर स्पष्ट समझ होनी चाहिए । इसका मतलब छापामार बलों के संगठन और अनुशासन, दोनों भी ऊंचे स्तर के होने चाहिये, ताकि वे राजनीतिक गतिविधियां चला सकें, जो कि छापामार युद्ध और क्रान्तिकारी युद्ध, दोनों की जान हैं ।

सबसे पहले, राजनीतिक गतिविधियां सैनिक और राजनीतिक नेताओं को जापान विरोधी विचारों से शिक्षित करने पर निर्भर करती है । उनके जरिये विचार सैनिकों में पहुंचाये जायेंगे। किसी व्यक्ति को भी वह सिर्फ एक छापामार यूनिट का सदस्य होने से ही अपने को जापान विरोधी नहीं समझना चाहिये । जापान विरोधी विचार मन में हमेशा घर करने वाली दृढ़ धारणा होनी चाहिये । यदि यह भुला दिया जाता है,तो हम दुश्मन के प्रलोभनों का शिकार बन सकते हैं, या निराशा के घेरे में आ सकते हैं और जिनके मन में जनता को जरूर मुक्त करने का पक्का इरादा नहीं होता, एक दीर्घकालीय युद्ध के दौरान उनका विश्वास ढुलमल हो सकता है या वे बगावत भी कर सकते हैं । जापानी साम्राज्यवाद को मार भगाकर आजाद और खुशहाल चीन की स्थापना करने के हमारे लक्ष्य से अवगत होने में मदद करने वाली आम शिक्षा के अभाव में सैनिक बिना किसी विश्वास के लड़ेंगे और दृढ़ संकल्प गंवा बैठते हैं।

छापामार इलाकों की जनता को इस राजनीतिक लक्ष्य से स्पष्ट और ठोस रूप से अवगत कराना चाहिये । उनकी राष्ट्रीय चेतना को जगाना चाहिये । इसलिये, उन राजनीतिक व्यवस्थाओं के बारे में जिनका हम इस्तेमाल कर रहे हैं, ठोस विवरण देना, न सिर्फ छापामार सेनाओं के लिये, उन तमाम लोगों जिनका हमारे राजनीतिक लक्ष्य से ताल्लुक हो, के लिये बेहद महत्व रखता है.....

.....

.....कुछ ऐसे सैन्यवादी भी हैं, जो कहते हैं : 'हमें राजनीति में रुचि नहीं है, सैनिक पेशे में ही हैं ।' इन भोले-भाले सैन्यवादियों को राजनीति और सैन्य मामलों के बीच मौजूद सम्बन्ध के बारे में अवगत कराना बहुत जरूरी है । एक राजनीतिक लक्ष्य हासिल करने के लिये सैन्य कार्रवाई एक जरूरी तरीका है ।

राजनीतिक गतिविधियों के व्यापक सवाल के तहत तीन अतिरिक्त विषय हैं, जिनकी चर्चा करना जरूरी है । पहला सेना में लागू होता है, दूसरा जनता पर लागू होता है और तीसरा दुश्मन पर लागू होता है । बुनियादी समस्यायें ये हैं : पहली, सेना के भीतर सैनिकों और अफसरों का मानसिक एकीकरण; दूसरी, सेना और जनता का मानसिक एकीकरण और आखिरी, दुश्मन की एकता का विनाश ।

एक क्रान्तिकारी सेना में अनुशासन का होना बहुत जरूरी है, जो कि सीमित जनवाद की बुनियाद पर स्थापित किया गया हो। सभी सेनाओं में निचले स्तर वालों को उच्च स्तर वालों का आज्ञापालन करना जरूरी होगा । हालांकि छापामार अनुशासन के मामले में भी यह नियम लागू होता है, पर छापामार अनुशासन का आधार व्यक्तिगत विवेक होता है । छापामारों के मामले में बलपूर्वक अनुशासन से कोई नतीजा नहीं निकलेगा । चूंकि किसी भी क्रान्तिकारी सेना में सैनिकों और अफसरों दोनों की लक्ष्य के प्रति एकता होती है, और इसलिये, ऐसी सेना में अनुशासन अपने आप ही लागू किया हुआ होता है । हालांकि छापामार कतारों में अनुशासन उतना सख्त नहीं होता, जितना कि परंपरागत बलों की कतारों में होता है, फिर भी अनुशासन की जरूरत तो होगी ही । और यह अपने आप ही लागू किया हुआ होना चाहिये, क्योंकि तभी सैनिक यह समझ सकेगा कि वह क्यों लड़ रहा है और उसे आज्ञापालन क्यों करना चाहिये। इस तरह का अनुशासन सेना के अन्दर प्रेरणा की एक मजबूत ताकत होगी । सैनिकों और अफसरों के बीच के सम्बन्ध को यकीनन मधुर बनाने वाला अनुशासन इसी तरह का होगा ।

ऐसी किसी भी व्यवस्था में, जिसमें अनुशासन बाहर से थोपा जाता हो, अफसर और सैनिक के बीच का रिश्ता आपसी उपेक्षा के रूप में प्रकट हो जाता है । यह विचार कि अफसर अपने सैनिकों से मारपीट कर सकता है या गाली-गलौज कर सकता है, सामंती विचार है । अपने आप पर लागू करने वाले अनुशासन से इसका कोई लेना-देना नहीं है । सामंती तरह का अनुशासन आंतरिक एकता और लड़ने की ताकत को तोड़ देगा । अपने आप पर लागू करने वाला अनुशासन सेना में एक जनवादी व्यवस्था का प्राथमिक लक्षण है ।

अफसरों और सैनिकों को दी जाने वाली आजादी की तादादों में दूसरा लक्षण प्रकट होता है । क्रान्तिकारी सेना में सभी व्यक्तियों को राजनीतिक आजादी दी जाती है । मसलन जनता को मुक्त करने का सवाल सिर्फ बर्दाश्त किये जाने वाला होकर नहीं रहेगा, बल्कि उस पर चर्चा होनी चाहिये और प्रचार को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिये और ऐसी सेना में अफसरों और सैनिकों के जीने के ढंग में कोई बड़ा फर्क होना ही नहीं चाहिये। और तो और एक छापामार सेना में यह सच्चाई और भी लागू होती है । अफसरों को अपने सैनिकों की तरह के हालात में ही जीना चाहिये और अपने सैनिकों की प्रशंसा और विश्वास जीतना, जो कि युद्ध में काफी महत्व रखता है, इसी तरह मुमकिन है । सभी समानता वाले सिद्धान्त से चिपके रहना गलत है । पर युद्ध में जोखिमों और मुश्किलों को सवीकारने में समानता जरूर होनी चाहिये । इस तरह हम अफसरों और सैनिकों की टोलियों के बीच समानता ला सकते हैं । यह एकता टोली के अन्दर भी हो सकती है और निचले स्तर से उच्च स्तर तक की टोलियों में हो सकती है । उस तरह की एकता से सम्पन्न यूनिटों को ही संघर्ष का शक्तिशाली केन्द्र कहा जा सकता है ।

अनुशासन के नियम :

1. अपनी सभी कार्रवाइयों में आदेशों का पालन करो ।
2. आम जनता से एक सुई या एक टुकड़ा धागा तक न उठाओ।
3. स्वार्थ और अन्याय से दूर रहो ।

ध्यान देने योग्य बातें :

1. जो किवाड़, तुमने बिछौना बनाने के लिये उतारे हों, उन्हें फिर से सही जगह लगा दो ।
2. जहां से पुवाल तुमने बिछाने के लिये ली है, उसे वहीं रख दो।
3. नम्रता से बोलो ।
4. जो कुछ खरीदो, उसकी ठीक-ठीक कीमत अदा करों ।
5. उधार ली हुई हर चीज को वापस लौटा दो ।
6. हर ऐसी चीज की कीमत अदा कर दो जो तुम से खराब हो गई हो ।
7. महिलाओं की नजर से बचकर नहाओ ।
8. बिना प्राधिकरण के बन्दियों की जेबों की तलाशी न लो ।

कई लोग सोचते हैं कि छापामारों के लिये दुश्मन के पृष्ठभाग में ज्यादा समय तक टिके रहना नामुमकिन है । ऐसा विश्वास जनता और छापामारों के बीच के सम्बन्धों पर समझदारी के अभाव को दर्शाता है । जनता की तुलना पानी से और छापामारों की तुलना मछलियों से की जा सकती है । कौन कह सकता है कि ये दोनों मिलकर नहीं रह सकते ? केवल अनुशासनहीन सेनायें जनता को दुश्मन बना लेती हैं । वे ही पानी से बाहर की हुई मछलियों की तरह जिन्दा नहीं रह सकेंगी।

दुश्मन की सेनाओं में प्रचार करके, पकड़े गये सैनिकों से ठीक बरताव करके और घायल होकर हमारी गिरफ्त में आने वालों का उपचार करके हम दुश्मन का विनाश करने का मकसद पूरा करने में काफी आगे बढ़ सकेंगे । इन बातों में हम विफल हो जाते हैं, तो दुश्मन की एकता को और भी मजबूत बनायेंगे ।

इसके पहले कि हम छापामार युद्ध के व्यावहारिक पहलुओं की चर्चा करते, बेहतर होगा कि एक बार लड़ाई के एक बुनियादी उसूल की याद की जाये, जिस पर पूरी सैनिक कार्रवाई टिकी हुई हो । इसे यूं कहा जा सकता है : अपनी खुद की ताकत का संरक्षण करना; दुश्मन की ताकत का विनाश करना । इस उसूल पर टिकी सैनिक नीति आजाद और समृद्ध चीन का निर्माण करने और जापानी साम्राज्यवाद का विनाश करने की दिशा ली हुई राष्ट्रीय नीति से मेल खाती है । इस नीति को और आगे बढ़ाने के लिये ही सरकार अपनी सैनिक शक्ति का इस्तेमाल करती है । क्या युद्ध द्वारा मांगी जा रही कुरबानी और अपना बचाव करने के विचार में कोई विरोधाभास नहीं है ? कतई नहीं, युद्ध में मांगी जाने वाली कुरबानियां दुश्मन का विनाश करने और अपना बचाव करने के लिये आवश्यक ही हैं ।

समूची जनता के बचाव के लिये उसके एक हिस्से को त्यागना जरूरी हो जाता है । सैनिक कार्रवाई से सम्बन्धित सभी विषय ऊपर के उसूल से ही उत्पन्न हो जाते हैं । उसका क्रियान्वयन सभी कार्यनीतिक व रणनीतिक विचारों में उतना ही स्पष्ट रूप से होता, जितना कि ओट लेकर दुश्मन पर गोली चलाने वाले एक सैनिक के सामान्य मामले में होता है ।

सभी छापामार यूनिटें शून्य से शुरू होकर विकसित होती हैं। अपनी ताकत को बचाने और विकसित करने के लिये तथा दुश्मन की ताकत का नाश करने के लिये क्या तरीके अपनाये जाएं ? आवश्यक छः प्रमुख अंश यहां नीचे दिये गये ।

1. पहलकदमी को बनाये रखना, सावधानी, रणनीतिक आत्मरक्षात्मक युद्ध में सावधानी से बनाई गई कार्यनीतिक योजना से चलने वाले हमले; रणनीतिक तौर पर लम्बे अरसे तक चलने वाले युद्ध में कार्यनीतिक रूप से तेजी हासिल करना; रणनीतिक रूप से भीतरी पांतों में चलने वाले युद्ध में कार्यनीतिक रूप से बाहरी पांतों में चलने वाली कार्रवाइयां ।
2. नियमित सेना की कार्रवाइयों की सहायता करने वाली कार्रवाइयां अपनाना ।
3. आधार क्षेत्रों की स्थापना करना ।
4. आक्रमण और बचाव के बीच सम्बन्ध पर स्पष्ट समझदारी।
5. चलायमान कार्रवाइयों का विकास ।
6. सही कमान ।

हालांकि संख्या की दृष्टि से दुश्मन कमजोर है, पर अपनी सेनाओं और साजोसामान की उत्कृष्टता की दृष्टि से मजबूत है । दूसरी ओर हम संख्या में ज्यादा हैं, पर उत्कृष्टता में कमजोर हैं। कार्यनीतिक आक्रमण, कार्यनीतिक तेजी और एक ऐसे युद्ध में जो कि स्वभाव में आत्मरक्षात्मक, स्वरूप में दीर्घकालिक और भीतरी पांतों में चालाया जा रहा हो, बाहरी पांतों में कार्यनीतिक कार्रवाइयां – इनसे सम्बन्धित नीति को विकसित करने में हमने ऊपर के विषयों को ध्यान में रखा । हमारी रणनीति इन्हीं धारणाओं पर आधारित है । सभी कार्रवाइयां के दौरान इन्हें जरूर ध्यान में रखना होगा ।

हालांकि परंपरागत युद्ध में आश्चर्य के पहलू को नकारा नहीं जा सकता, पर छापामार लड़ाई की तुलना में उसमें उसे लागू करने के कम अवसर होंगे । छापामार लड़ाइयों में तेजी आवश्यक है । छापामार सेनाओं की गतिविधियां बेहद गुप्त और गजब की तेजी की होनी चाहिए । दुश्मन को उनकी भनक तक नहीं लगनी चाहिए । गजब की तेजी से कार्रवाई में उतरना चाहिए । योजनाओं पर अमल करने में कोई हिचकिचाहट नहीं होनी चाहिए । नकारात्मक या निष्क्रिय आत्मरक्षा वाला विचार नहीं होना चाहिए । सेनाओं को अनेक हथियारबन्द लड़ाइयों में बड़े पैमाने पर नहीं बिखेरना चाहिए । हिंसात्मक और विनाशकारी ढ़ंग से धावा बोलना ही बुनियादी तरीका होना चाहिए ।

कुछ मौकों पर हमला कई दिनों तक खिंच सकता है (दुश्मन की टुकड़ी का सफाया करने में यदि उतना समय जरूरी होता है तो) । लेकिन ज्यादा से ज्यादा तेजी से हमला करना ही फायदेमन्द होगा । छापामार युद्ध में आत्मरक्षा की कार्यनीति की कोई जगह ही नहीं होगी । यदि एक विलम्बकारी कार्रवाई जरूरी हो तो तंग रास्ते, नदियों के घाट और गांव बेहद अनुकूल स्थिति तैयार करते हैं, क्योंकि ऐसी जगहों पर दुश्मन की व्यवस्था को तोड़कर

उसका सफाया किया जा सकता है ।

दुश्मन हमारे मुकाबले ज्यादो बलवान है , और यह सच है कि यदि हमारे बलों को बिखेर देते हैं, तो उसे रोककर, उसका ध्यान हटाकर, तितर-बितर कर विनाश कर सकते हैं । हालांकि छापामार युद्ध इस तरह की छितरी यूनिटों का युद्ध है, लेकिन कुछ मौकों पर केन्द्रित करना भी वांछनीय है ताकि दुश्मन का सफाया किया जा सके । इस तरह अपेक्षापूर्ण कमजोर दुश्मन के खिलाफ बलों को केन्द्रित करने का नियम छापामार युद्ध में भी लागू होता है ।

हम इस लड़ाई को लम्बा खींचकर दीर्घकालिक युद्ध में तभी तबदील कर सकेंगे जब हम सकारात्मक और बिजली सी तेजी के कार्यनीतिक फैसले लेते हैं, हमारी मानवशक्ति को सही तरीके से केन्द्रित करते और बिखेरते हैं और दुश्मन को घेरकर सफाया करने के लिए बाहरी पांतों में कार्रवाइयां चलाते हैं ।

बाद में हम पहलकदमी, सावधानी और ध्यानपूर्वक योजना के बारे में चर्चा करेंगे । युद्ध में पहलकदमी क्या होती है ? चूंकि सभी लड़ाइयों ओर युद्धों में कार्रवाई में आजादी उसी पक्ष में होती है जिसकी पहलकदमी होती है, इसलिए दोनों युद्धरत पक्षों में पहलकदमी हासिल करने और उसे टिकाए रखने के लिए लड़ाई चलती है । एक सेना पहलकदमी गंवाती है, तो वह अपनी आजादी गंवा देती है, वह निष्क्रिय हो जाती है, और उसे हार या विनाश का खतरा भी मोल लेना पड़ सकता है ।

पहलकदमी का मामला छापामार सेना के लिए विशेष महत्व रखता है । वह ऐसी कठिन स्थिति का सामना करती है जिसे नियमित सेना ने कभी नहीं किया । दुश्मन की श्रेष्ठता, अपनी कतारों में एकता और अनुभव की कमी आदि इस स्थिति में गिनी जा सकती हैं । बहरहाल, दुश्मन के कमजोर पहलुओं को ध्यान में रखकर छापामार पहलकदमी हासिल कर सकते हैं.....

..... स्थिति का जायजा लेने में थोड़ी सी भूल भी हो जाए, चाहे वह कितनी छोटी ही क्यों न हो, तो छापामार निष्क्रिय भूमिका निभाने की स्थिति में आने पर मजबूर हो सकते हैं । वे तब तक समझ चुके होते हैं कि दुश्मन के हमलों का मुकाबला करना सम्भव नहीं है ।

किसी भी सैन्य नेता को पहलकदमी हासिल करने की क्षमता आसमान से नहीं मिलती । प्रतिभा सम्पन्न नेता ही स्थिति के बारे में और उससे जुड़े सैनिक और राजनीतिक अंशों के क्रम के बारे में ध्यानपूर्वक अध्ययन और आकलन करके पहलकदमी हासिल कर लेता है । जब एक छापामार यूनिट, उसके नेता का अनुमान सही न होने के कारण या दुश्मन के दबाव के कारण, निष्क्रिय स्थिति में जाने को मजबूर बन जाती है, तब इस स्थिति से उबरना ही पहला कर्तव्य बन जाता है । इसके लिए कोई भी तरीका नहीं सुझाया जा सकता, क्योंकि यह तरीका हरेक मामले में स्थिति के ऊपर निर्भर करता है । जरुरत पड़े तो भाग जा सकता है । कुछेक बार स्थिति एकदम निराशाजनक लगती है, जबकि दरअसल वह ऐसी होती नहीं है । ऐसे मौकों पर एक अच्छा नेता उस पल को पहचान कर छीन लेता है जब खोई पहलकदमी को दोबारा हासिल किया जा सकता हैं ।

हम फिर से चौकसी की ओर मुड़ेंगे । अपनी सेनाओं का चौकसी से नेतृत्व करना एक छापामार कमांडर के लिए बहुत ही जरुरी विषय है । नेताओं को यह जरुर समझ लेना चाहिए कि चौकसी से काम करना पहलकदमी हासिल करने में बेहद महत्वपूर्ण विषय है, और अपने बलों एवं दुश्मन के बलों के बीच की तुलनात्मक स्थिति पर भी असर डालने वाला पहलू है । छापामार कमांडर दुश्मन की स्थिति, भौगोलिक स्थिति और स्थानीय स्थितियों को ध्यान में रखते हुए अपनी कार्रवाइयां तय कर लेते हैं । इन विषयों में होने वाले बदलावों को भांपने में नेताओं को चौकसी बरतनी चाहिए । उनके अनुरुप अपने बलों के फैलाव में फेर-बदल कर लेना चाहिए । नेताओं को मछवारों की तरह काम करना चाहिए । वे पानी की गहराई, प्रवाह की गति और अपने जालों को बिगाड़ सकने वाले अवरोधों को पहचानकर, उसके अनुरुप जाल फेंक सकते हैं और पीछे खींच भी सकते हैं । जिस तरह मछवारे अपने हाथों की डोर के सहारे जाल को काबू में रख लेते हैं, छापामार नेता भी अपनी यूनिट से निकट सम्बन्ध में रहकर उसे अपने काबू में रख लेते हैं । जिस तरह मछवारों को अपना स्थान बदलना पड़ता है, छापामार कमांडरों को भी ऐसा ही करना पड़ता है । केंद्रित करना, बिखेरना, स्थानों को लगातार बदलते रहना - छापामार अपने बलों का इस्तेमाल इन्हीं तरीकों में करते हैं ।

.....

बलों के बिखराव और केन्द्रीकरण के अलावा नेता को सतर्कता से जगह बदलने के बारे में जरुर समझदारी होनी चाहिए। जब दुश्मन छापामारों का खतरा महसूस करता है, तब वह आमतौर पर हमले के लिए बल भेजता है । छापामारों को स्थिति का मुआयना करके यह तय कर लेना चाहिए कि वे कहां और कब लड़ना चाहते हैं । वे यदि यह समझते हैं कि वे लड़ नहीं सकेंगे, उन्हें तेजी से जगह बदलनी होगी । बाद में थोड़ा-थोड़ा करके दुश्मन का सफाया किया जा सकता है । मिसाल के तौर पर एक छापामार दस्ता एक जगह पर जब दुश्मन की एक टुकड़ी का सफाया करता है, तब उसे किसी दूसरी जगह ले जाया जा सकता है ताकि दुश्मन की दूसरी टुकड़ी पर हमला करके सफाया किया जा सके । कुछेक बार अमुक जगह पर किसी दस्ते का रहना फायदेमंद नहीं हो सकता और ऐसी सूरत में उसे जल्दी से जगह बदलनी होगी ।

जब स्थिति गम्भीर हो, छापामारों को बहते पानी की तरह और उड़ती हवा की तरह तेजी से चलना होगा । उनके दांवपेंच दुश्मन को धोखा देने, गुमराह करने और लुभाने के होने चाहिये। दुश्मन में यह आभास पैदा करना चाहिये कि वे पूर्व और उत्तर से हमला करने वाले हैं, और पश्चिम और दक्षिण से धावा बोलना चाहिये । हमला करके तेजी से निकल जाना चाहिये । उन्हें जरूर रात में ही चलना होगा ।

बिखराव, केन्द्रीकरण और सतर्कता से बलों का स्थान बदलने में ही छापामारों की पहलकदमी व्यक्त की जाती है । छापामार बेवकूफी और अड़ियल रवैया अपनाते हैं, तो वे निष्क्रिय स्थिति में जाने को मजबूर हो जाते हैं और बुरी तरह तबाह हो जाते हैं, पर छापामार कार्रवाइयों के निर्वाह में कुशलता यहां चर्चा की गई बातों को समझने भर से हासिल नहीं होगी, बल्कि लड़ाई के मैदान में उन्हें वास्तव में लागू करने से हासिल होती है । पल-दर-पल

बदलते हालात् पर लगातार नज़र रखते हुये निर्णायक कार्रवाई के लिये सही समय का चुनाव करने की कुशाग्र बुद्धिमत्ता उन पर्यवेक्षकों में ही पाई जाती है, जो प्रखर और विचारशील हों ।

छापामार युद्ध में जीत हासिल करनी है तो ध्यानपूर्वक बनाई गई योजना जरूरी है । जो बिना किसी ढंग के लड़ते हैं, वे छापामार लड़ाई के स्वभाव को नहीं समझते । कार्रवाई में नियुक्त यूनिट का आकार चाहे जो भी हो, एक योजना बहुत जरूरी है। आगे-पीछे सोचकर बनाई गई योजना एक दस्ते के लिये जितनी जरूरी है, एक रेजिमेन्ट के लिये भी उतनी ही जरूरी है । स्थिति का ध्यानपूर्वक अध्ययन करने के बाद जिम्मेदारियों का बँटवारा किया जाना चाहिये। राजनीतिक और सैनिक हिदायतें, साज-सामान की आपूर्ति वाला मामला और स्थानीय नागरिकों के सहयोग का मामला, योजनाओं में इन सभी का समावेश जरूर होना चाहिये । इन मामलों के अध्ययन के अभाव में न तो पहलकदमी हासिल करना सम्भव होगा और न ही चौकन्ने से कार्रवाई करना सम्भव होगा । यह सच है कि छापामार सिर्फ सीमित योजनायें ही बना सकते हैं, पर इसके बावजूद, हमने जिन विषयों का जिक्र किया, उन पर जरूर गौर करना होगा ।

एक हमले के फलस्वरूप मिलने वाली सकारात्मक जीत के बाद ही पहलकदमी हासिल की जा सकती है और बनाए रखी जा सकती है । एक हमला जरूर छापामारों की पहलकदमी से ही किया जाना चाहिये । इसका मतलब है छापामार अपनी पहलकदमी गंवाकर मजबूरन हमले का फैसला लेने की स्थिति को कभी नहीं मोल लेना चाहिये । कोई भी जीत ध्यानपूर्वक बनाई गई योजना और सतर्क नियन्त्रण के फलस्वरूप ही मिलती है । बचाव की हालत में भी, हमारे पूरे प्रयास दोबारा हमला शुरू करने के होने चाहिये, क्योंकि सिर्फ हमले से ही हम दुश्मन का सफाया कर सकते हैं और अपना बचाव कर सकते हैं । जहां तक दुश्मन के सफाये का सवाल है, बचाव या पीछे हटना पूरी तरह बेकार है, और जहां तक अपने बलों के बचाव का सवाल है, उनका महत्व अस्थाई ही है । यह नियम छापामारों और नियमित सेनाओं, दोनों पर लागू होता है, फर्क सिर्फ उसकी तीव्रता में होता है और अमल के तरीके में होता है ।

.....

आधार क्षेत्रों की स्थापना करने की समस्या विशेष रूप से महत्वपूर्ण है । ऐसा इसलिये क्योंकि यह युद्ध निर्मम है और दीर्घकालिक लड़ाई है । राजनीतिक प्रत्याक्रमण के जरिये ही खोये भू-भागों को फिर से हासिल किया जा सकता है । यह कदम हम तब तक नहीं उठा सकते, जब तक कि दुश्मन चीन में बहुत भीतर तक नहीं घुसता । परिणामस्वरूप दुश्मन हमारे देश के कुछ हिस्से पर, या यहां तक कि अधिकांश हिस्से पर कब्जा कर सकता है । वह सब उसका पृष्ठभाग बन सकता है। इस विशाल इलाके में भीषण छापामार युद्ध चलाकर, दुश्मन के पृष्ठभाग को एक और युद्ध के मैदान में बदलना-यही है हमारा कर्तव्य । यदि हम ऐसा करते हैं, तो दुश्मन को अपने कब्जे वाले इलाकों को दबाकर रखने के लिये दिन-ब-दिन ज्यादा से ज्यादा क्रूरतम दमनचक्र का सहारा लेना पड़ता है ।

छापामार युद्ध के आधार-क्षेत्र वे रणनीतिक अड्डे हैं, जिन पर छापामार शक्तियां अपने को प्रशिक्षित करने , सुरक्षित करने और विकसित करने के लिये निर्भर रहती हैं । छापामार युद्ध की विशेषता यह होती है कि उसकी कार्रवाइयां बिना पृष्ठभाग के होती हैं । लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि बिना आधार-क्षेत्रों के छापामार अपने अस्तित्व को कायम रखते हुये लम्बे अरसे तक काम कर सकेंगे ।

आधार-क्षेत्रों के बारे में और भी स्पष्ट रूप से समझने के लिये निम्नलिखित समस्याओं को समझना होगा ।

1. आधार-क्षेत्रों की किस्में
2. छापामार इलाके और आधार क्षेत्र
3. आधार-क्षेत्रों की स्थापना की शर्तें
4. आधार-क्षेत्रों को सुदृढ़ बनाना और विकसित करना

भौगोलिक दृष्टि से आधार-क्षेत्रों की मुख्यतया ये किस्में हैं : जो पहाड़ों में हैं, जो मैदानों में हैं, जो नदियों-झीलों-मुहानों के तटवर्ती प्रदेशों में हैं । पहाड़ी इलाकों में आधार-क्षेत्रों की स्थापना के फायदे सभी को मालूम हैं.....

.....दुश्मन के पृष्ठभाग में चलने वाले छापामार युद्ध में छापामार इलाके और आधार-क्षेत्र के बीच भेद होता है । ऐसे इलाके जिनके चारों ओर दुश्मन का कब्जा है लेकिन जिनके मध्य भाग दुश्मन के अधिकार में नहीं है, या उससे वापस ले लिये गये हैं । ऐसे बने बनाये आधार-क्षेत्र हैं, जिनके भरोसे छापामार दस्ते आसानी से छापामार युद्ध विकसित कर सकते हैं । कुछ और इलाकों को छापामार युद्ध के आरम्भ में छापामार दस्ते अपने कब्जे में पूरी तरह नहीं ला सके थे; छापामार दस्ते इन पर क्रूल बार-बार आक्रमण करते रहते थे । ये इलाके छापामारों के हाथ में सिर्फ तभी आते हैं, जब वे वहां पहुंचते हैं, और जब वे चले जाते हैं तो ये इलाके कठपुतली शासकों के हाथ में चले जाते हैं । इन तरह के इलाके छापामारों के आधार-क्षेत्र नहीं, बल्कि छापामार इलाके कहलाते हैं । इस प्रकार के छापामार इलाके आधार-क्षेत्रों में तभी परिवर्तित हो सकेंगे, जब वे छापामार युद्ध की आवश्यक प्रक्रिया से गुजर चुके होंगे, यानी जब दुश्मन की फौजों की एक बड़ी संख्या को नष्ट या परास्त कर दिया जायेगा, कठपुतली शासन को नष्ट कर दिया जाएगा, जन-समुदाय की सक्रियता जागृत हो उठेगी, जापान-विरोधी जन-संगठन कायम हो जाएंगे, जन-समुदाय की स्थानीय हथियारबन्द शक्तियों का विकास हो जाएगा और एक जापान-विरोधी राजनीतिक सत्ता कायम हो जाएगी.....

.....

आधार-क्षेत्रों की स्थापना के लिये बुनियादी शर्त यह है कि जापान-विरोधी सशस्त्र सेना हो, तथा इस सशस्त्र सेना को दुश्मन को हराने और जन-समुदाय को कार्यवाही के वास्ते जागृत करने के काम में जुटाया जाए । इस प्रकार, आधार-क्षेत्र कायम करने की पहली समस्या सशस्त्र सेना के निर्माण की समस्या है । छापामार युद्ध में नेताओं को चाहिये कि वे अपनी तमाम शक्ति को एक या अनेक छापामार यूनिटें बनाने में लगाएं, और संघर्ष के दौरान उन्हें कदम-ब-कदम छापामार फारमेशनों के रूप में

विकसित करें, यहां तक कि उन्हें नियमित सेना की यूनिटों व फारमेशनों का रूप दे दें । आधार-क्षेत्र कायम करने की अत्यन्त बुनियादी कुंजी सशस्त्र सेना का निर्माण करना है । अगर सशस्त्र सेना न हो, या सशस्त्र सेना कमजोर हो, तो कुछ भी नहीं किया जा सकता । यह पहली शर्त है ।

आधार-क्षेत्र कायम करने के लिये दूसरी अनिवार्य शर्त यह है कि सशस्त्र सेना का उपयोग जन-समुदाय के साथ तालमेल कायम करके दुश्मन को हराने के लिये होना चाहिये । दुश्मन द्वारा नियंत्रित तमाम दुश्मन के अड्डे हैं, छापामार आधार-क्षेत्र नहीं, तथा यह स्पष्ट है कि उन्हें छापामार आधार-क्षेत्रों में तब तक नहीं बदला जा सकता जब तक दुश्मन को हरा नहीं दिया जाता । यदि हम दुश्मन के हमलों को पीछे नहीं ढकेलेंगे और उसे हराएंगे नहीं, तो छापामारों द्वारा नियंत्रित स्थान भी दुश्मन द्वारा नियंत्रित स्थान बन जाएंगे, और तब आधार-क्षेत्रों की स्थापना भी असम्भव हो जाएगी ।

आधार-क्षेत्र कायम करने के लिये तीसरी अनिवार्य शर्त यह है कि अपनी तमाम शक्ति, जिसमें हमारी सशस्त्र सेना भी शामिल है, जापान के विरुद्ध संघर्ष करने के लिये जन-समुदाय को जागृत करने में लगा दी जाए । इस प्रकार के संघर्ष के दौरान हमें जनता को हथियारबन्द करना चाहिये, यानी आत्मरक्षा कोर और छापामार दस्तों का संगठन करना चाहिये । इस संघर्ष के दौरान हमें जन-संगठनों का निर्माण करना चाहिये; हमें मजदूरों, किसानों, नौजवानों, स्त्रियों, बच्चों, व्यापारियों और आजाद पेशे के लोगों को उनकी राजनीतिक चेतना और उनके जुझारू उत्साह के स्तर के अनुसार जापान के खिलाफ संषर्घ करने के लिये विभिन्न प्रकार के आवश्यक जन-संगठनों में संगठित करना चाहिये, तथा इन जन-संगठनों को कदम-ब-कदम विकसित करना चाहिये । यदि जन-समुदाय असंगठित रहेगा तो जापान के खिलाफ लड़ाई में वह अपनी शक्ति का प्रदर्शन नहीं कर सकेगा । ऐसे संघर्ष के दौरान हमें खुले या छिपे रूप में गद्दारी करने वालों का सफाया कर देना चाहिये; यह एक ऐसा काम है जो हम केवल जन-समुदाय की शक्ति पर निर्भर रहकर ही पूरा कर सकते हैं । इस संघर्ष में, जापान-विरोधी राजनीतिक सत्ता के स्थानीय संगठनों को कायम करने या उन्हें सुदृढ़ बनाने के लिये जन-समुदाय को जागृत करना विशेष रूप से महत्वपूर्ण है । जहां पहले से मौजूद चीनी राजनीतिक सत्ता के संगठन दुश्मन द्वारा नष्ट न किये गये हों, वहां हमें व्यापक जन-समुदाय के समर्थन के आधार पर उनमें सुधार करना चाहिये और उन्हें मजबूत बनाना चाहिये; जहां पहले से मौजूद चीनी राजनीतिक सत्ता के संगठन दुश्मन द्वारा नष्ट कर दिये गये हों, वहां हमें व्यापक जन-समुदाय के प्रयत्नों के आधार पर उन्हें फिर से कायम करना चाहिये । राजनीतिक सत्ता के ऐसे संगठन जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे की नीति पर अमल करते हैं और उन्हें चाहिये कि वे अपने एकमात्र दुश्मन, जापानी साम्राज्यवाद तथा उसके गुर्गों-गद्दारों और प्रतिक्रियावादियों के खिलाफ लड़ने के लिये जनता की तमाम शक्तियों को एकताबद्ध करें ।

ऊपर बताई गई तीन बुनियादी शर्तों को कदम-ब-कदम पूरा करके ही सही मायने में छापामार युद्ध के लिये आधार-क्षेत्र कायम किया जा सकते हैं,यानी जापान-विरोधी सशस्त्र सेना का निर्माण करने, दुश्मन को शिकस्त देने और जन-समुदाय को जागृत करने के बाद ही यह काम पूरा हो सकता है ।

.....

आधार-क्षेत्र कायम करने के लिये एक और अनिवार्य शर्त यह है कि छापामार दस्तों और जनता के बीच सहयोग होना चाहिये। हमारी तमाम शक्ति जापान का सशस्त्र प्रतिरोध करने का सिद्धान्त फैलाने, जनता को हथियारबन्द बनाने, आत्मरक्षा यूनिटों का संगठन करने और छापामार दस्तों को प्रशिक्षित करने में लगा दी जाये । इस सिद्धान्त को हमें जनता में बड़े पैमाने पर फैलाना चाहिये । हमें जन-समुदायों को जापान विरोधी दस्तों में संगठित करना चाहिये । उनकी राजनीतिक प्रतिभा को पैना बनाना चाहिये और उनके जुझारू उत्साह को विकसित करना चाहिये । यदि मजदूरों, किसानों, आजादी के दीवानों, नौजवानों, स्त्रियों, बच्चों - इन सभी को संगठित नहीं करेंगे, तो अपनी जापान-विरोधी शक्ति का अन्दाजा वे कभी नहीं लगा सकेंगे । जनता की संगठित ताकत ही गद्दारों का सफाया कर सकती है, हमारे हाथों से खोई राजनीतिक सत्ता को दोबारा हासिल कर सकती है और हमारी बची राजनीतिक सत्ता को सुरक्षित व विकसित कर सकती है.....

दुश्मन के अड्डों पर हमला करके और उसके जरिये हम हमारे आधार-क्षेत्रों को सुदृढ़ बनाना और विकसित करना चाहते हैं, तो पूरे आधार-क्षेत्र में हमारी कार्रवाइयां फैलाई जायें । इससे हमें जनता को संगठित करने, साज-सामान से लैस करने और प्रशिक्षित करने का मौका मिल गया है, और इस तरह दीर्घकालिक युद्ध की छापामार नीति एवं साथों-साथ, राष्ट्रीय नीति को आगे बढ़ाने में सहायता मिलती है । कुछेक मौकों पर हमें आधार-क्षेत्रों को विस्तारित और विकसित करने पर जोर लगाना होगा, और कुछेक मौकों पर संगठन, प्रशिक्षण और जनता के साज-सामान देने पर ।

छापामार लड़ाई को परंपरागत स्वभाव के चलायमान युद्ध की कार्रवाइयों में विकसित करना है, तो छापामारों की संख्या एवं गुण दोनों को बेहतर बनाना होगा । ज्यादा से ज्यादा संख्या को सेना में भर्ती कर लेना चाहिये, जो कि प्राथमिक समस्या है । उसके बाद साज-सामान के गुण और प्रशिक्षण के प्रमाणों को बेहतर बनाना चाहिये । राजनीतिक प्रशिक्षण पर ज्यादा ध्यान देना चाहिये । हमारे निर्माण, हथियारों के इस्तेमाल में हमारी तकनीक, हमारे दांवपेंच-सभी को जरूर बेहतर करना होगा। हमारे अन्दरूनी अनुशासन को सुदृढ़ कर लेना चाहिये । सैनिकों को राजनीतिक शिक्षा देनी चाहिये । छापामार दस्तों के स्तर से सिलसिलेवार नियमित रेजिमेन्टों के स्तर पर विकसित होना चाहिये। इसके लिये आवश्यक राजनीतिक और सैनिक अफसरों और कर्मचारियों को जुटा लेना चाहिये । साथ ही साथ, पर्याप्त आपूर्ति, चिकित्सा और साफ-सफाई की यूनिटों का गठन पर भी ध्यान देना होगा । साज-सामान के प्रमाणों को जरूर बढ़ा लेना चाहिये। हथियारों की किस्मों को बढ़ा लेना चाहिये । संचार उपकरणों को नहीं भूलना चाहिये । अनुशासन में परम्परागत प्रमाण स्थापित किया जाये । ❖

छोटे छापामार दस्ते : छापामार इलाकों में लाड़ाई का प्रमुख संगठनात्मक रुप

22 जनवरी, 1940

(जापान-विरोधी प्रतिरोध युद्ध के दौरान, छोटे छापामार दस्तों के संगठनात्मक स्वरुप के महत्व के बारे में बताने वाला यह लेख कॉ. ये चेनचुन ने लिखा था जो चीनी जन-मुक्ति सेना के पदाधिकारियों में से एक थे । कॉ. माओ ने इस लेख को सम्पादित किया ।)

उत्तरी चीन में जापान-विरोधी युद्ध का हमारा अनुभव बताता है कि दुश्मन की पांतों के पृष्ठभाग में प्रतिरोध को जारी रखने के लिए हमें लम्बे समय तक कठिन लड़ाई चलानी होगी । ऐसे हालात में हम यदि विजय प्राप्त होने तक दृढ़तापूर्वक डटे रहना चाहते हैं, तो स्थानीय पार्टी-संगठनों और जन आन्दोलनों को विकसित करने पर जरुर ध्यान केन्द्रित करना होगा । पार्टी, सरकार और सेना के समूचे कार्य के लिए जन समुदायों की लामबन्दी ही बुनियाद तैयार करती हैं ।

उत्तरी चीन में तीन प्रकार के क्षेत्र हैं : शानशी - छाहाड़-हपे जैसे प्रतिरोधात्मक आधार-क्षेत्र, उत्तर पश्चिमी शानशी और दक्षिण-पूर्वी शानशी जैसे आधार-क्षेत्र पहली तरह के हैं । ये सब विशाल क्षेत्र हैं; और एक दूसरे से सटे हुए हैं । और ये अपेक्षापूर्ण मजबूत स्थिति में हैं । दुश्मन इन पर धावा बोलने के लिए हिचकिचा जाता है । दुश्मन अधिकृत क्षेत्र, दुश्मन की फौजों द्वारा हथियाए गए मजबूत स्थान और उनके इर्द-गिर्द के क्षेत्र दूसरी तरह के हैं । तीसरी तरह छापामार इलाके हैं । इन इलाकों में हम भी और दुश्मन भी प्रवेश कर सकते हैं । क्षेत्रफल की दृष्टि से ये इलाके ही अन्य इलाकों से बड़े हैं ।

इन इलाकों में कुछ भी स्थिर नहीं है, वे लगातार बदल रहे हैं। जापानी सेनाओं या कठपुतली सेनाओं द्वारा शहरों या नगरों में कब्जा किए गए मजबूत स्थानों पर हम फिर से अधिकार जमाकर उनके आसपास के भू-भागों में कार्य करते हैं , तो वहां के छापामार इलाके आधार-क्षेत्रों में बदल जाते हैं । इस तरह हम आधार-क्षेत्रों को विस्तारित कर सकेंगे । एक आधार-क्षेत्र के अमुक हिस्से पर जापानी सेनाएं या कठपुतली सेनाएं कब्जा करती हैं, तब वह आधार-क्षेत्र छोटा हो जाता है, जबकि दुश्मन अधिकृत-क्षेत्र या छापामार इलाका व्यापक हो जाता है । अब ऐसा ही होता रहा है और कुछ अरसे तक ऐसा ही चलेगा । अस्थाई तौर पर आधार-क्षेत्रों का परिमाण सिकुड़ जाने की संभावना भी रहती है और दुश्मन अधिकृत इलाकों के विस्तारित होने की सम्भावना भी है। दुश्मन के मजबूत अड्डों को तबाह कर , उसके अधिकृत इलाके को घटाकर उन इलाकों को आधार-क्षेत्रों में तबदील करने के लिए छापामार इलाकों के दुश्मन पर हमला करना हमारी नीति है । इस तरह आधार-क्षेत्र विस्तारित हो सकेंगे । चीन से जापानी दुराक्रमणकारियों को मार भगाने के लिए वे बाकी देश से हाथ मिला सकेंगे ।

आधार-क्षेत्रों के निर्माण पर और दुश्मन अधिकृत इलाकों में कार्य पर मैं बहुत ज्यादा चर्चा नहीं करना चाहता हूं । अब छापामार इलाकों में दुश्मन के खिलाफ जन संघर्षों के तरीकों का अध्ययन करना ही महत्वपूर्ण सवाल है । उत्तरी चीन के छापामार इलाकों में जन-समुदाय किन-किन तरीकों को आजमाने जा रहे हैं ? पार्टी इकाइयों और 34 नगरों की सरकारों ने वहां के सक्रिय कार्यकर्ताओं को जन संगठनों के नेतृत्व के काम करने वाले छाटे दस्तों में संगठित किया । ये दस्ते आकार में भी, हथियार और सामग्री में और उनकी गतिविधियों के दायरे में भिन्न-भिन्न हो सकते हैं । लेकिन वे सभी गांव और उपनगरों में पार्टी, सरकारों और जन संगठनों की रक्षा में अपनी सेवाएं दे रहे हैं । वे जापानी दुराक्रमकारियों को परेशान कर रही हैं । वे ऐसी हथियारबन्द यूनिटें हैं जिन्होंने जनता के दिल जीत लिए । कियांग्सी सोवियत के इलाके में क्वोमिन्ताङ द्वारा चलाई गई घेरा डालकर विनाश करने वाली पांच मुहिमों के प्रतिरोध के दौरान जनता ने स्वयं यह रुप अपनाया । पार्टी के सक्रिय नेतृत्व में ये यूनिटें तेजी से विस्तारित हो गईं । वे अब समूचे उत्तरी चीन में काम कर रही हैं । अनुभव ने साबित कर दिया कि छापामार इलाकों में सैन्य गतिविधियों के लिए छोटे छापामार दस्ते ज्यादा फिट होते हैं और वहां की लड़ाई में वही प्रमुख संगठनात्मक रुप है । उत्तरी चीन के सात अलग-अलग इलाकों में उस तरह के दस्तों के क्रियाकलापों का अध्ययन करने के बाद मुझे विश्वास हो गया कि बाकी इलाकों में भी इन्हें संगठित किया जा सकता है । पर इन छोटे दस्तों को जरुर ज्यादा बड़ी छापामार यूनिटों और नियमित सैन्य यूनिटों के सहयोग व समर्थन पर निर्भर रहना होगा, नहीं तो वे जम नहीं सकेंगे ।

निम्न लिखित वजहों से छोटे छापामार दस्तों के महत्व को बल मिलता है -

पहली, प्रतिरोध-युद्ध में नागरिकों को शामिल करने के लिए वह अत्यन्त अनुकूल रुप है । चूंकि जापानी सेनाएं और कठपुतली सेनाएं छापामार इलाकों के भीतर आकर लूटपाट और तबाही मचाती

हैं, इसलिए वहां जनता को अपने हितों की रक्षा में हथियारबन्द प्रतिरोध के लिए संगठित होना जरुरी बन जाता है । इस तरह उनके अपने हित देश के हितों से समन्वित किए जाते हैं । उनके अपने गांव की सुरक्षा समूची जनता के जापान-विरोधी आधार-क्षेत्रों की सुरक्षा के काम से समन्वित की जाती है । इसीलिए, छापामार इलाकों के नागरिक जल्दी से पहचान सकते हैं कि उनके अपने हित जापान-विरोधी युद्ध का अभिन्न हिस्सा हैं । और इसलिए दुश्मन से लड़ने के लिए छापामार दस्तों को संगठित करने को वे हमेशा तत्पर रहते हैं ।

दूसरी, छोटे छापामार दस्ते की गतिविधियों में भाग लेना पार्टी सदस्यों को कठोर बनाता हैं ; कैडरों को प्रशिक्षित करता है। इस तरह पार्टी, सरकार और जनसंगठनों तालमेंल कायम किया जाएगा । अनुभव यह बताता है कि हथियारबन्द बल के बिना कम्युनिस्ट पार्टी-यानी एक छोटे गुप्त संगठन के बजाए एक बड़ी पार्टी के रुप में - न तो अस्तित्व में होगी और न ही विकसित हो पायेगी । यह सच्चाई आज के युद्ध - क्षेत्रों में और भी ज्यादा साफ दिखती है । हथियारबन्द बलों के बिना पार्टी का अस्तित्व ही नहीं होगा । पार्टी का अस्तित्व ही हथियारबन्द लड़ाई पर निर्भर है। यह हथियारबन्द लड़ाई पार्टी को मजबूत बनाने और विस्तारित करने में अपना सहयोग देती है । साथोंसाथ हथियारबन्द लड़ाई के बिना आधार-क्षेत्रों में राजसत्ता कायम करना ही कतई संभव नहीं होगा, विस्तारित करने की बात तो दूर की कौड़ी है । छोटे छापामार दस्तों के अभाव में छापामार इलाके दुश्मन अधिकृत इलाके बन जाएंगे; उन इलाकों में पार्टी और सरकार के संगठन सिकुड़ जाएंगे और ढ़ह भी जाएंगे । छोटे छापामार दस्तों में शामिल होकर नए पार्टी - सदस्य शत्रु-सेनाओं और कठपुतली सेनाओं के खिलाफ जनता का नेतृत्व करने में बेहद सख्त बन जाएंगे । इस निर्दयी लड़ाई में पार्टी में घुसपैठ किए बदमाश अपनी असलियत को उजागर कर देंगे । ढुलमुल शख्स इस कसौटी पर खरे नहीं उतर पाएंगे । उन्हें छानकर भेजा जा सकता है । स्थानीय पार्टी संगठनों से आए फौजी कैडरों को व्यापक दायरे में चलने वाली इस तीखी और जटिल लड़ाई में प्रशिक्षत कर पाएंगे ।

तीसरी, छोटे छापामार दस्ते बड़ी छापामार यूनिटों और नियमित हथियारबन्द सैनिकों को सुचारु ढ़ंग से समर्थन व सहयोग कर सकेंगे । नियमित हथियारबन्द सेनाएं मुख्य रुप से आधार-क्षेत्रों मे अपनी गतिविधियों को जारी रखती हैं । लेकिन, दुश्मन से लड़ने के लिए वे अक्सर छापामार इलाकों में घुस जाती हैं । बड़ी छापामार यूनिटें छापामार इलाकों में नियमित रुप से सैन्य कार्रवाइयां संचालित करती रहती हैं । इन दोनों को उनकी सैन्य कार्रवाइयों में सहयोग देते हुए छोटे छापामार दस्ते सीमाओं पर और समूचे छापामार इलाकों में चलकर सैन्य कार्रवाईयां अपनाती हैं । वे आत्मरक्षा दस्तों की केंन्द्र बिन्दु के तौर पर सेवा करते हैं। जहां ऐसे दस्ते न हों वहां भी काम कर सकेंगी । पूरे छापामार इलाकों में काम करते हुए वे नियमित हथियारबन्द सेनाओं और बड़ी छापामार यूनिटों की कार्रवाईयों को सुविधाजनक बनाते हैं । वे उनके सहायक बल होने के अलावा, रिक्त स्थानों की भर्ती करने के लिए एक विश्वसनीय स्रोत के तौर पर भी उपयोगी होंगे।

उपरोक्त विषय का मतलब है छोटी छापामार टोलियों के कार्य पर हमें ज्यादा जोर लगाना होगा ।

हमें यह कार्य कैसे चलाना चाहिए ?

सबसे पहले, हमें अपने कैडरों को इस तरह के दस्तों के महत्व समझाना होगा । इससे वे उन्हें संगठित करने का काम यन्त्रवत करने के बजाए, उस काम को जापानी दुराक्रमणकारियों के खिलाफ हथियारबन्द लड़ाई में जन-समुदायों को शामिल करने का एक महत्वपूर्ण रास्ता मानकर उसके लिए वे भरसक प्रयास करते हैं । पार्टी-इकाइयों को इन छोटे छापामार दस्तों के केन्द्र के तौर पर काम करना चाहिए । सक्रिय कार्यकर्ताओं को चाहिए कि वे पहले एक या दो छोटे दस्तों का गठन कर जनता को पार्टी-कैडरों के नेतृत्व में काम करने वाले केन्द्रीय ग्रुपों में गोलबन्द करते हुए, धीरे-धीरे ज्यादा से ज्यादा लोगों को भर्ती करें ताकि और ज्यादा दस्तों का गठन किया जा सके ।

दूसरा , जब तक हालात बेहतर नहीं हो जाते, हमें तब तक किसी भी छोटे छापामार दस्ते का बड़ी छापामार यूनिट में या नियमित हथियारबंद सेनाओं में विलय नहीं करना चाहिए । छाटे दस्ते जब कुकुरमुत्तों की तरह विकसित हो जाएंगे, उसके बाद ही यह काम करना चाहिए ।

और उसके बाद नए दस्तों को संगठित करना चाहिए । छोटे छापामार दस्तों का गठन करने के फौरन बाद दूसरे हथियारबन्द बलों में उनका विलय कर देने से जनता की रही-सही सुरक्षा भी लुप्त हो जाएगी, और वह दुश्मन के आतंक का शिकार बन जाएगी । इसका हल यही है कि छोटे दस्तों में से किसी का भी दूसरों यूनिटों में विलय करने से पहले उनकी सहायता की जाए ताकि वे विस्तारित होकर तादाद की दृष्टि से बराबरी हासिल कर सकें ।

अन्त में, जापान-विरोधी आधार-क्षेत्रों और छापामार इलाकों के सभी स्तरों के पार्टी-संगठनों को चाहिए, कि वे छाटे छापामार दस्तों के संबंध में अपने काम का विश्लेषण करें । इस तरह के दस्तों के विकास को बड़ी छापामार यूनिटों के विकास से और आत्मरक्षा दस्तों के विकास से समन्वित करने के बारे में, तथा इन तीनों के बीच बेहतर संबंध कायम करने के बारे में ध्यान दें । हम आशा कर रहे हैं कि उस तरह के अध्ययन छापामार इलाकों मे हमारे काम को ज्यादा सफल बनाएंगे।

एक रेजिमेन्टल पार्टी-कमेटी में जनवादी केन्द्रीयता पर हुई बहस

(जनवादी केन्द्रीयता हमारी पार्टी का संगठनात्मक नियम है। अलग-अलग स्तरों की पार्टी-कमेटियों में, व्यक्ति और समूह के बीच के मामलों में सही तरीके का व्यवहार करना जनवादी केन्द्रीयता के अमल का एक अहम सवाल है । पार्टी में सामूहिक नेतृत्व को सुनिश्चित करने के लिए वह एक आवश्यक पूर्व-शर्त है। क्रांतिकारी चीन में, जन-मुक्ति सेना के ट्सीनान शहर इकाई की रजिमेन्टल पार्टी कमेटी में इस मुद्दे पर की गई बहसों से इस सवाल पर न सिर्फ सैद्धान्तिक तौर पर , बल्कि अपनी इकाई के अनुभवों से भी ब्यौरा मिलता है । इसलिए 22 अक्तूबर, 1971 को 'पेकिङ रिव्यू' के 45वें अंक में प्रकाशित यह लेख 'प्रभात' के पाठकों के लिए पेश किया जा रहा है - सम्पादक)

कुछ समय पहले, ट्सीनान शहर की जन-मुक्ति सेना की इकाई के तहत एक रेजिमेन्टल कमेटी की स्थाई समिति ने सामूहिक अध्ययन का कार्यक्रम अपनाकर रेजिमेंटल कैडरों की सैद्धान्तिक समझ के आधार पर एक फैसला लिया । लेकिन उस कमेटी के सचिव इस बैठक में शामिल नहीं हो सके क्योंकि उन्हें दूसरी बैठक में जाना पड़ा था । इसलिए इस फैसले को स्वीकृति के लिए भेजा गया । उन्हें यह फैसला उचित नहीं लगा, तो उन्होंने उसे स्थगित कर रख दिया । हालांकि कमेटी के बाकी सदस्य अपने सचिव के इस कदम का अनुमोदन नहीं किया, परन्तु उन्होंने यह सोचा कि चूंकि अंतिम फैसला सचिव को ही लेना है, तो वे कुछ नहीं कर पाएंगे , सिवाए उसका अनुमोदन करने के ।

कुछ समय बाद, जब वह पार्टी-कमेटी जनवादी केन्द्रीयत के सवाल का अध्ययन कर रही थी, तब एक सदस्य ने उपरोक्त मामला उठाया । उस पर बहस हुई । कुछ कॉमरेड बोले कि सचिव को सिर्फ अपनी व्यक्तिगत राय पर सामूहिक फैसले को निरस्त करना नहीं चाहिए था, अत: उन्होंने इस तरह गलती की । कुछ और लोगों ने कहा कि सचिव की राय ही निर्णायक होती है, और जब स्थाई समिति का फैसला उन्हें अनुमोदन के लायक नहीं लगा, तो उसे स्थगित कर रख दिया । उन्होंने सचिव का कदम सही ठहराया । और उसके बाद सचिव और कमेटी-सदस्यों ने इस सवाल के मद्देनजर रखकर उस पर अध्यक्ष माओ की रचनाओं का अध्ययन करके उसका अनुभव तथा व्यवहार से ली गई सीखों की रोशनी में विश्लेषण किया ।

सचिव को अपनी व्यक्तिगत राय को किस नजरिए से देखना चाहिए था ?

बहस की शुरुआती दौर में सचिव ने स्थाई समिति के फैसले का सरांश ठीक ही लगने के बावजूद उसे स्थगित करने का अपना कदम सही कहा क्योंकि उसे अभी निचले स्तरों में भेजने से अन्य कार्यों में बाधा उत्पन्न हो सकता था । उसने माना कि बतौर सचिव के उसे स्थगित कर रखने की जिम्मेदारी थी उस पर ।

गलत फैसले का अनुमोदन नहीं करने की जिम्मेदारी सचिव पर है, परन्तु, क्या वह पार्टी-कमेटी में उस मुद्दे पर चर्चा किए बगैर ही व्यक्तिगत तौर पर बहुमत के फैसले को ठुकरा सकता है ? इस मसले का विश्लेषण करके, बहस करने के बाद वे एक सहमति पर पहुंचे । एक पार्टी-कमेटी में सचिव ही ऐसा सदस्य है जिस पर अहम जिम्मेदारी होती है । उसे माओ विचारधारा के जरिए 'सिंहद्वार' की रक्षा करनी होगी । परन्तु सिंहद्वार की रक्षा और जनवादी केन्द्रीयता पर आधारित व्यवहार को एकीकृत करना पड़ेगा। *''सचिव और कमेटी-सदस्यों के बीच का सम्बन्ध ऐसा सम्बंध ही है कि अल्पमत को जरुर बहुमत के मातहत होना होगा।''* सिंहद्वार की रक्षा करने की जिम्मेदारी के बहाने सचिव को पार्टी के जनवादी केन्द्रीयता के नियम का उल्लंघन नहीं करना चाहिए । बहुमत के फैसले को नहीं ठुकरा देना चाहिए । उसे जनवादी केन्द्रीयता पर दृढ़ता से अमल करना होगा पार्टी के सामूहिक नेतृत्व को सुनिश्चित करना होगा, सिंहद्वार की रक्षा के लिए सिर्फ खुद पर निर्भर होने के बजाए अपने दस्ता-सदस्यों पर निर्भर करना होगा ।

कुछ कॉमरेडों ने अतीत में हुई एक घटना की याद की । पिछले साल के अंत में रेजिमेन्ट ने एक फैसला लिया था कि पहली कम्पनी सैनिक-विन्यास शुरू करे । वह कार्यभार स्वीकारने वाली पहली कम्पनी ने उसके बारे में एक विस्तृत योजना बनाकर अनुमोदन के लिये पार्टी-कमेटी को भेज दी । स्थाई समिति के कई सदस्यों का मत था कि वह योजना ठीक है और उस पर अमल किया जा सकता है । जबकि सचिव ने मत व्यक्त किया कि उस योजना में राजनीतिक और सैद्धान्तिक सिखलाई पर पर्याप्त जोर नहीं दिया गया, तकनीकी प्रशिक्षण पर हद से ज्यादा जोर दिया गया और इसके चलते उसका मार्गदर्शक सिद्धांत ज्यादा ठीक नहीं है । इस बार दूसरे कॉमरेडों के मतों को साफ तौर पर ठुकराने का तरीका अपनाने के बजाए, उन्होंने यह मत रखा कि स्थाई समिति इन दोनों तरहों के मतों का अध्ययन करे । विषय पर मुकम्मल बहस के बाद सभी ने सचिव की राय से सहमति जताई और प्रशिक्षण की योजना में आवश्यक सुधार किया और इस काम में कम्पनी की सहायता करने में एक कैडर को भी इन्होंने भेजा । पहली कम्पनी ने अध्यक्ष माओ की सीखों पर चेतनापूर्वक अमल करते हुए अपना प्रशिक्षण कार्यक्रम को सफलता से पूरा किया । तब सभी कमेटी सदस्यों ने सचिव की यह कहकर प्रशंसा की कि उन्होंने स्थाई समिति के कुछ सदस्यों को अपने गलत मत छोड़ने में सहायता करने के लिये अपने सही मतों का इस्तेमाल किया, और इस सवाल पर अपने दस्ता-सदस्यों की समझदारी बढ़ा दी । सचिव ने एक ओर सिंहद्वार की भी सही रक्षा की, दूसरी ओर

जनवादी केन्द्रीयता भी लागू किया गया ।

तब एक सदस्य ने यूं कहा : *''सही रायों को इकट्ठा करना ही जनवादी केन्द्रीयता का मकसद है । यदि सचिव की राय सही हो तो क्या वह बहुमत को दरकिनार कर सकता है?''* उसके बाद इस सवाल का उन्होंने गौर से विश्लेषण किया और एकमत से निष्कर्ष निकाला कि ऐसा नहीं करना चाहिये । क्योंकि इसकी पहली वजह, *''अल्पमत का बहुमत के मातहत होना''* जनवादी केन्द्रीयता के मूल नियमों में एक है । यदि सचिव की राय सही हो और अत्यधिक सदस्यों की राय गलत हो, तब भी सचिव को एकतरफा ढंग से नहीं ठुकराना चाहिये । बजाये इसके उन्हें समझाकर अपनी राय मनवानी चाहिये । दूसरी वजह, भले ही सचिव यह माने कि उसकी अपनी राय सही है, लेकिन पार्टी-कमेटी के सभी सदस्यों का अनुमान और फैसले पर यह निर्भर करता है कि वह सही है या नहीं । व्यवहार यह बताता है कि सचिव के दूसरों की राय पर नम्रता से ध्यान न देने, या सही विचारों को इकट्ठा करने में उसकी कुशलता की कमी से कुछ मौकों पर उनकी रायें असंपूर्ण या ज्यादा ठीक न होने, और यहां तक कि गलत साबित होने की संभावना भी है । वह अगर अत्यधिक सदस्यों के विचारों को एकतरफा ढंग से इन्कार करेगा, तो उसमें यह खतरा भी हो सकता है, कि गलत विचार से सही विचारों को ठुकरा दिया जाये ।

सदस्यों को सचिव की रायों को किस तरह स्वीकारना चाहिये?

बहस और गहरी हो गई । तब गुछ कामरेडों ने एक अन्य सवाल उठाया : हालांकि हम सभी को लगा था कि सामूहिक फैसले को ठंडे बस्ते में डालकर सचिव ने ठीक नहीं किया, तब क्यों कर किसी ने भी समय पर आपत्ति नहीं उठाई । उन्होंने ऐसा इसलिये किया क्योंकि उनका मानना था कि पार्टी कमेटी के काम की प्रमुख जिम्मेदारी सचिव की ही है, और उसके विचार ही निर्णायक हैं । सहज ही उसने अन्तिम फैसला लिया । इसलिये उनके भिन्न मत के बावजूद, सचिव के प्रति सम्मान प्रकट कर, उसके पीछे खड़े रहने का यही तरीका समझकर सदस्यों ने अपनी आपत्ति प्रकट नहीं की ।

सचिव की रायों के प्रति सही रवैया कैसा हो, इस सवाल का उन्होंने विश्लेषण किया । सदस्य इस बात पर एकमत थे कि सचिव का सम्मान करना चाहिये और उसके पीछे दृढता से खड़े होना चाहिये । यह नहीं होने से पार्टी-कमेटी एक मजबूत नेतृत्व-केन्द्र (न्यूक्लियस) नहीं बन सकती । दूसरी ओर, कमेटी सदस्यों और सचिव को भी चाहिये कि वे सबसे पहले पार्टी-कमेटी के सामूहिक नेतृत्व का सम्मान करें और उसका समर्थन करें । इसके अभाव में सामूहिक नेतृत्व सचिव के व्यक्तिगत नेतृत्व में तब्दील हो सकता है । इस तरह पार्टी-कमेटी सामूहिक नेतृत्व के उसूल पर कायम नहीं रह सकेगी । तब सचिव को कोई सच्चा सम्मान या समर्थन नहीं मिलेगा । उसका नतीजा पार्टी की जनवादी केन्द्रीयता की अवहेलना और पार्टी के सामूहिक नेतृत्व को कमजोर बनाना ही होगा । उन्हें सचिव का समर्थन व सम्मान भी करना चाहिये, साथ ही साथ, पार्टी के सामूहिक नेतृत्व को भी कायम रखना चाहिये ।

एक ऐसी घटना थी, जिसने पूरी पार्टी को गंभीरता से सोचने पर मजबूर किया । पिछले जाड़े के मौसम में कमेटी ने सोचा कि प्रशिक्षण कार्यक्रम के तहत् घात हमले (ऐम्बुश) में प्रशिक्षण दिया जाए । इस योजना की रचना के दौरान कमेटी के अधिकांश कामरेडों ने अपने पिछले अनुभव के मद्देनजर रखते हुए, रात के समय किये जाने वाले घात हमले के अभ्यास में ऐसे रास्ते को चुनने का सुझाव दिया, जो फील्ड से नजदीक हो । उन्होंने यह समझा कि हमला ज्यादा नजदीक से किया जाना ठीक होगा ताकि नजदीकी आमने-सामने की लड़ाई में सेनाओं को प्रशिक्षित किया जा सके । सचिव और उपसचिवों ने इस सुझाव को ठीक मान लिया और तय किया कि इसके अनुरूप एक योजना बनाई जाए ।

लेकिन, जब वह योजना लगभग पूरी तरह तैयार हो गई, एक सदस्य ने उसे ध्यान से परखकर एक आपत्ति उठाई । घात लगाकर हमला करने के लिये फौजों को सही 'मोर्चे' संभाल लेने पड़ेंगे । चूंकि अतीत में अभ्यास रातों में ही हुए थे और चूंकि गहरे अंधेरे में 'मोर्चा' संभालना आसान ही था, इसलिये दुश्मन पर ज्यादा नजदीक से घात लगाया जा सकता था । पर इस बार रात में, मोर्चे सम्भालने के बावजूद घात हमला तो दिन को ही करना पड़ता है, इसलिये जब वह हमला किया जाएगा, हो सकता है उस समय दिन का साफ उजाला हो । वे रास्ते से जितनी नजदीक होंगीं उतनी आसानी से जाहिर हो जाएंगी । इसलिये फौजें ऐसे घात हमले से अपना मकसद पूरा नहीं कर सकेंगी । उस सदस्य ने सुझाव दिया कि पार्टी-कमेटी पहले की राय और उसकी राय पर दोबारा चर्चा करें । सचिव और उपसचिव दोनों ने इस सदस्य की राय ध्यान से सुनकर दोबारा चर्चा के लिये कमेटी की बैठक बुलाई। सभी ने मान लिया कि उस सदस्य की राय ठीक है । उसके अनुसार योजना में फेर-बदल किया गया । अभ्यास सफलता से चलाये गये । इस घटना से स्पष्ट हो गया कि उस कमेटी सदस्य ने पार्टी सचिव का समर्थन करने के अलावा सामूहिक नेतृत्व को भी कायम किया । इस नियम से गुमराह हो जाते हैं, तो वह पार्टी के मकसद के प्रति जिम्मेदाराना रवैया नहीं होगा । सचिव के प्रति कोई वास्तविक सम्मान जताना या समर्थन देना भी नहीं होगा ।

किस तरह सचिव की रायें कमेटी के बहुमत सदस्यों की रायों में तब्दील होंगी?

कुछ कामरेडों ने बाद में एक और सवाल उठाया : हालांकि हमें यह मालूम है कि सचिव और कमेटी-सदस्यों के बीच संबंध अल्पमत बहुमत के मातहत रहने वाला संबंध ही है, फिर भी व्यावहारिक कार्यों में हम इस पर कायम रहने में क्यों विफल हो रहे हैं ?

इस ठोस सवाल के मद्देनज़र रखकर उन्होंने अध्यक्ष माओ की उस सीख का अध्ययन किया, जिसमें कहा गया, **''एक सचिव या उपसचिव यदि उसके अपने 'दस्ता सदस्यों' के बीच प्रचार कार्य और संगठनात्मक कार्य चलाने में ध्यान नहीं देगा, कमेटी-सदस्यों के साथ बेहतर सम्बन्ध कायम नहीं रख सकेगा**

और बैठकों को सफलतापूर्वक चलाने के मसले का अध्ययन नहीं करेगा, तो हो सकता है, उसे अपने 'दस्ते' का मार्गदर्शन करने में दिक्कतें पेश आएं ।'' उस अध्ययन के जरिए इस आम धारणा को वे समझ सके थे । एक पार्टी-कमेटी की बैठक में, हो सकता है, कुछेक बार सचिव अल्पमत में आ जाए, परन्तु कमेटी सदस्यों के बीच अपने कार्य के जरिए वह बहुमत हासिल कर सकेगा। यह न सिर्फ पूरी तरह एक स्वाभाविक विषय है, बल्कि जनवादी केन्द्रीयता के उसूल के अनुरूप भी है । इस तरह का कार्य नहीं करने से पार्टी-कमेटी में विचारों में एकता कायम नहीं की जा सकेगी; 'दस्ता सदस्य' कदम से कदम मिलाकर नहीं चल पाएंगे और जनवादी केन्द्रीयता कायम नहीं की जाएगी । और बाद में इन कमेटी सदस्यों ने पिछले साल आदर्श कम्पनी के चुनाव के समय चौथी कम्पनी के सवाल पर पार्टी-कमेटी द्वारा अपनाए गए व्यवहार को एक बार याद किया और उस अवसर पर पार्टी-सचिव द्वारा दो-तीन बार चलाए गए कार्य का ठोस विश्लेषण किया ।

चौथी कम्पनी लगातार नौ साल तक आदर्श कम्पनी चुनी गई। लेकिन 10वें साल में उसमें कभी-कभी घमण्ड और आत्मसंतुष्टि दिखाई देने लगी । उसने अपने लड़ाकुओं में सैद्धान्तिक व राजनीतिक कार्य चलाने में ढिलाई बरती । उसके काम में कुछ समस्याएं उत्पन्न हुईं । इसलिए उसे बतौर आदर्श कम्पनी के मानने से अत्यधिक कमेटी सदस्यों ने पहले नकार दिया । लेकिन, सचिव और उप सचिव का मानना यह था कि चूंकि चौथी कम्पनी कई सालों से आदर्श कम्पनी के तौर पर चुनी जाती रही, और इस वर्ष उसे उस रूप में मानने से विफल हो जाते हैं, तो वह कम्पनी सभी के लिये बदनामी अर्जित कर सकती है और उसके मामले में अपने उच्च स्तर के लोगों के सामने सफाई पेश करने में दिक्कत होगी । इसलिए उन्होंने कमेटी सदस्यों की राय पर ध्यानपूर्वक विचार करने के बजाए अपनी ही बात चलाने की जिद की । उन्होंने शुरू में स्थाई समिति के सदस्यों को मनवाने की कोशिश की । उन्होंने स्थाई समिति के सदस्यों से आग्रह किया कि वे कमेटी के अन्य सदस्यों को भी मनवाने के लिये समझाएं । लेकिन, अधिकांश कमेटी-सदस्यों के मन में असंतोष होने के बावजूद, उन्होंने संगठनात्मक उसूल को नजरअंदाज कर अपनी इच्छा के विपरीत सचिव और उपसचिव की राय का अनुमोदन इस डर से किया कि उनकी राय का अनुमोदन नहीं करने पर कहीं वह पूरे काम पर बुरा असर न डाले । पर उच्च स्तर की पाटी-कमेटी ने जन-समुदायों के विचारों और चौथी कम्पनी के वास्तविक हालात को ध्यान में रखते हुए निचले दर्जे की कमेटी के उस प्रस्ताव को ठुकरा दिया । इसने कमेटी-सदस्यों को काफी चिन्तित किया ।

उच्च दर्जे की पार्टी-कमेटी के आदेश पर अमल करने के सवाल पर बहस करने के लिए हुई पार्टी-कमेटी की बैठक में, पहले भिन्न विचार व्यक्त करने वाले कामरेडों ने शिकायतें कीं, जबकि वे कामरेड जिन्होंने चौथी कम्पनी को आदर्श कम्पनी मानने का पक्ष लिया, जल्दी अपनी राय बदलने को तैयार नहीं हुए । उन्होंने अध्यक्ष माओ की सीखों का दोबारा अध्ययन किया । तब जाकर सचिव ने अपने मन के स्वार्थपूर्ण विचारों और चौथी कम्पनी का 'समर्थन' करने के अपने गलत मार्गदर्शक विचार के बारे में आत्मालोचना कर ली । उसके बाद उसने भिन्न राय प्रकट करने वाले कामरेडों से दिल खोलकर बात की । पहले उसने अपने खिलाफ की गई आलोचनाएं सुनीं, बाद में यह कहकर कि उन्हीं के विचार ज्यादा सही थे, उनको चिन्ता से उबरने को प्रोत्साहन दिया । और उसके बाद उन कामरेडों, जिन्होंने चौथी कम्पनी की प्रशंसा करने का दावा किया था, को अपनी राय बदलने में मदद दी । इस तरह उसने अपने दस्ता-सदस्यों के विचारों को तेजी से एकताबद्ध किया।

सचिव द्वारा इस तरह दो बार चलाए गए कार्य की तुलना करने के बाद कमेटी-सदस्यों ने माना कि नतीजे पूरी तरह भिन्न-भिन्न रहे । पहले, उसने चाहा था कि बाकी लोग अपनी राय से सहमत हो जाएं, परिणामस्वरूप उसने विचारों को गलत तरीके से एकताबद्ध किया । काम का ऐसा तरीका सारांशतया एक व्यक्ति जो बताए वही चले वाले तरीके की एक अलग तस्वीर ही है । उसने दूसरी बार जो तरीका अपनाया, वह है ''भिन्न मतों को ध्यान से सुनना तथा जटिल समस्याओं और भिन्न मतों का ध्यानपूर्वक विश्लेषण करना ।'' इस तरह खुद वह और उसके 'दस्ता-सदस्य' शिक्षित हो गए । इसके जरिए मतों का सही केन्द्रीकरण और एकीकरण करने में कामयाबी हासिल की ।

सचिव की समीक्षा

इन बहसों के जरिए सचिव और कमेटी-सदस्यों ने पार्टी की जनवादी केन्द्रीयता की भावना पर गहरी समझ प्राप्त की । अंत में सचिव ने खुले दिल से सम्पूर्ण समीक्षा की । उन्होंने कहा : हालांकि मौजूदा बहस ठोस सवालों पर ही हुई, पर वह एक केन्द्रीय मुद्दे पर, यानी कमेटी-सदस्यों के बीच तथा व्यक्ति व समूह के बीच सम्बन्ध ठीक से कैसे कायम किए जाएं, इसके इर्द-गिर्द ही चली । जनवादी केन्द्रीयता को सन्तोषजनक तरीके से लागू कर सकेंगे या नहीं, इस सवाल के हल की यही बुनियादी शर्त है । कमेटी-सदस्यों की बहसों से स्पष्ट होता है कि पहले सचिव ओर पार्टी-कमेटी के बीच सम्बन्ध ठीक से कायम किए जाएं । कमेटी का सचिव 'दस्ता नेता' के दर्जे के होने के बावजूद, उसे पार्टी-कमेटी के सामूहिक नेतृत्व के मातहत ही रखा जाना चाहिए, उसे कमेटी पर कभी भी हुकुमशाही नहीं चलानी चाहिये । सचिव और कमेटी के बीच सम्बन्ध कभी-कभी सही तरीके से क्यों नहीं रह पाते ? इस सवाल का सही समाधान न हो पाना ही उसकी एक वजह है। पार्टी-कमेटी में कमेटी-सदस्य रहते हैं । एक सचिव यदि अपने को कमेटी-सदस्यों से बढ़िया व्यक्ति समझता है, तो इसका मतलब वह वास्तव में अपने को पार्टी-कमेटी से ऊंचे दर्जे पर रख रहा है। आम कमेटी-सदस्य पार्टी-कमेटी के रोजमर्रा के कामकाज में शामिल नहीं होते, परन्तु उन्हें अपने को पार्टी-कमेटी से अलग-थलग नहीं करना चाहिए । पहले उन्हें उसका अभिन्न हिस्सा बनना चाहिए, सामूहिक नेतृत्व में सक्रिय रूप से भाग लेना चाहिए और पार्टी की जनवादी केन्द्रीयता का चेतनापूर्वक संरक्षण करना चाहिए।

हममें व्याप्त ''सचिव ही बुद्धिमान है'' वाला सिद्धान्त सर्वहारा पार्टी की चेतना के खिलाफ है । एक व्यक्ति को यह बीमारी पकड़ लेगी, तो वह यह समझता है कि पूरी स्थिति उसके हाथों में है, उच्च लोगों के आदेशों को दूसरों के मुकाबले वह ही पहले समझ

जाएगा । निचले स्तरों में मौजूद स्थिति पर उसे अधिक से अधिक समझ है, और इसलिये वह हर विषय में भी दूसरों से उत्तम है । ऐसा सिद्धान्त सारांश में तराशे गए ''जन-समुदाय पिछड़े हुए हैं'' वाले सिद्धान्त के सिवाए कुछ नहीं है । वह इतिहास के प्रति आदर्शवादी भावना का ही प्रतिबिम्ब है, और इस बात की एक अभिव्यक्ति के अलावा कुछ नहीं है कि पार्टी-चेतना बिगाड़ी जा चुकी है । यदि कोई व्यक्ति इस सिद्धान्त से प्रभावित हो जाता है, तो वह अनिवार्य रूप से खुद को दूसरों से उत्तम मान लेगा, और वह पार्टी-कमेटी और व्यक्ति के स्थानों में उलट-फेर कर देगा । अनिवार्य ही वह किसी न किसी हद तक आशा करेगा कि ''जो वह बताएगा, बाकी लोग वह करो ।''

पार्टी-कमेटी के 'दस्ता-सदस्यों' में 'दस्ता-नेता' और कमेटी-सदस्य दोनों होते हैं । उनमें से कुछ पुराने होंगे और कुछ नए । पार्टी-कमेटी को चाहिए कि जनवादी केन्द्रीयता के नियम के मुताबिक, वह अपने हर सदस्य की पहलकदमी और रचनात्मकता को पूरी तरह विकसित करे । माओ विचारधारा के जो अनुरूप हो उसे सक्रिय मदद देनी चाहिए और जो अनुरूप नहीं हो उसका चेतनापूर्वक प्रतिरोध करना चाहिए । कमेटी को ऐसा कतई नहीं मानना चाहिए कि सचिव के विचार कमेटी-सदस्यों के विचारों से श्रेष्ठ जरूर हों, और कमेटी के पुराने सदस्यों के विचार नए सदस्यों के विचारों से श्रेष्ठ जरूर हों । इस बात की गारन्टी देना कि राजनीतिक किस्म की कोई गलतियां नहीं हो सकेंगी और इस बात पर जोर देना कि फैसले लेना सचिव का स्वाभाविक काम है, उस तरह की गलत भावना का प्रतिरूप ही है ।